इग्नू
जन जन का
विश्वविद्यालय

BECC-101

प्रारंभिक व्यष्टि-अर्थशास्त्र

ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY

सामाजिक विज्ञान विद्यापीठ
इंदिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय

विशेषज्ञ समिति

प्रो. इंद्राणी राय चौधरी
सह-आचार्य (अर्थशास्त्र)
जवाहर लाल नेहरू विश्वविद्यालय
नई दिल्ली

प्रो. एस. के. सिंह
अवकाश प्राप्त आचार्य (अर्थशास्त्र)
इग्नू, नई दिल्ली

प्रो. जी. प्रधान
अवकाश प्राप्त आचार्य (अर्थशास्त्र)
इग्नू, नई दिल्ली

श्री आई.सी. धींगरा
अवकाश प्राप्त सहआचार्य
शहीद भगत सिंह कॉलेज
दिल्ली विश्वविद्यालय दिल्ली

डॉ. एस. पी. शर्मा
सह-आचार्य (अर्थशास्त्र)
श्याम लाल कॉलेज
दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली

प्रो. बी. एस. बागला
अवकाश प्राप्त सह-आचार्य (अर्थशास्त्र)
पीजीडीएवी कॉलेज
दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली

श्रीमती नीति अरोड़ा
सहायक आचार्य (अर्थशास्त्र)
माता सुंदरी कॉलेज
दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली

श्री सोगतो सेन
सह-आचार्य (अर्थशास्त्र)
इग्नू, नई दिल्ली

प्रो. नारायण प्रसाद
आचार्य (अर्थशास्त्र)
इग्नू, नई दिल्ली

पाठ्यक्रम संयोजक : प्रो. नारायण प्रसाद

पाठ्यक्रम निर्माण दल

खंड/ इकाई सं.	विषय प्रवेश	इकाई लेखक एवं हिंदी अनुवादक
खंड 1	**परिचय**	
इकाई 1	अर्थशास्त्र एवं अर्थव्यवस्था का परिचय	श्री आई.सी. धींगरा, अवकाश प्राप्त सहआचार्य, शहीद भगत सिंह कॉलेज, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली **हिंदी अनुवाद** – श्री. बी.एस. बागला, इग्नू, नई दिल्ली
इकाई 2	माँग एवं आपूर्ति विश्लेषण	
इकाई 3	माँग और आपूर्ति : व्यावहारिक अनुप्रयोग	
खंड 2	**साधन बाज़ार**	
इकाई 4	उपभोक्ता व्यवहार गणनावाचक दृष्टिकोण	डॉ. विजेता बनवारी, सहायक आचार्य (अर्थशास्त्र) महाराजा सूरजमल संस्थान, नई दिल्ली **हिंदी अनुवाद** – श्री सुरेंद्र कुमार शर्मा, सहायक आचार्य (अर्थशास्त्र), श्यामलाल कॉलेज, दिल्ली
इकाई 5	उपभोक्ता व्यवहार : क्रमवाचक दृष्टिकोण	
खंड 3	**उत्पादन एवं लागतें**	
इकाई 6	एक परिवर्ती आगत का उत्पादन फलन	डॉ. वी.के.पुरी, सह-आचार्य (अर्थशास्त्र), श्याम लाल कॉलेज, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली **हिंदी अनुवाद** – श्री मनदीप कुमार, प्रवक्ता– अर्थशास्त्र, राजकीय प्रतिभा विद्यालय, वसंत कुंज, नई दिल्ली
इकाई 7	दो एवं दो से अधिक आगतों का उत्पादन फलन	
इकाई 8	लागत फलन	
खंड 4	**बाज़ार संरचना**	
इकाई 9	पूर्ण प्रतियोगिता : फर्म एवं उद्योग के संतुलन	डॉ. एस.पी. शर्मा, सह-आचार्य–अर्थशास्त्र, श्याम लाल कॉलेज, दिल्ली **हिंदी अनुवाद** – डॉ. श्याम सुंदर सिंह चौहान अवकाश प्राप्त सहआचार्य–अर्थशास्त्र, राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, सिरसागंज, फिरोजाबाद
इकाई 10	एकाधिकार : कीमत एवं उत्पादन निर्णय	श्रीमती श्रुति जैन, सहायक आचार्य (अर्थशास्त्र) माता सुंदरी कॉलेज, नई दिल्ली **हिंदी अनुवाद** – डॉ. श्याम सुंदर सिंह चौहान
इकाई 11	एकाधिकारिक प्रतियोगिता : कीमत एवं उत्पादन निर्णय	
इकाई 12	अल्पाधिकार : कीमत एवं उत्पादन निर्णय	
खंड 5	**साधन बाज़ार**	
इकाई 13	साधन बाज़ार : साधन कीमत निर्धारण	डॉ. नौसीन निज़ामी, सहायक आचार्य (अर्थशास्त्र पं. दीन दयाल उपाध्याय, पेट्रोलिम विश्वविद्यालय, अहमदाबाद **हिंदी अनुवाद** – डॉ. श्याम सुंदर सिंह चौहान
इकाई 14	श्रम बाज़ार	
इकाई 15	भूमि बाज़ार	
खंड 6	**आर्थिक क्षेम : बाज़ार की विफलता एवं राज्य की भूमिका**	
इकाई 16	आर्थिक क्षेम : पूर्ण प्रतियोगिता के अंतर्गत आवंटनात्मक दक्षता	डॉ. एस.पी. शर्मा, सह-आचार्य (अर्थशास्त्र) श्याम लाल कॉलेज, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली **हिंदी अनुवाद** – डॉ. श्याम सुंदर सिंह चौहान
इकाई 17	बाज़ार तंत्र की दक्षता : बाज़ार की विफलता एवं राज्य की भूमिका	डॉ. ममता महर, पोस्ट डॉक्टरल फेलो, वेल्यूचेंन एवं न्यूट्रीशन कार्यक्रम, वर्ल्ड फिश, मलेशिया **हिंदी अनुवाद** – डॉ. श्याम सुंदर सिंह चौहान

पाठ्यक्रम संपादक : प्रो. नारायण प्रसाद एवं श्री बी. एस. बागला

सामग्री निर्माण	कार्यालयी सहायक
श्री मनजीत सिंह अनुभाग अधिकारी (प्रकाशन), इग्नू, नई दिल्ली	सुश्री कामिनी डोगरा आशुलिपिक, एसओएसएस, इग्नू, नई दिल्ली

जनवरी, 2019

© *इंदिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय, 2019*

ISBN:

सर्वाधिकार सुरक्षित। इस सामग्री के किसी भी अंश को इंदिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय की लिखित अनुमति के बिना किसी भी रूप में मिमियोग्राफी (चक्र मुद्रण) द्वारा अथवा किसी अन्य साधन से पुनः प्रस्तुत करने की अनुमति नहीं है।

इंदिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय के पाठ्यक्रमों के विषय में अधिक जानकारी विश्वविद्यालय के कार्यालय, मैदान गढ़ी नई दिल्ली–110068 से अथवा इग्नू की आधिकारिक वेबसाइट www.ignou.ac.in से प्राप्त की जा सकती है।

इंदिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय की ओर से निदेशक, सामाजिक विज्ञान विद्यापीठ द्वारा मुद्रित और प्रकाशित।

लेजर टाइप सेट– ग्राफिक प्रिंटर्स, मयूर विहार फेस 1, दिल्ली – 110091

मुद्रण –

ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY

विषय वस्तु

खंड/इकाई	विषय प्रवेश	पृष्ठ संख्या
खंड 1	**परिचय**	**4**
इकाई 1	अर्थशास्त्र एवं अर्थव्यवस्था का परिचय	7
इकाई 2	माँग एवं आपूर्ति विश्लेषण	26
इकाई 3	माँग और आपूर्ति : व्यावहारिक अनुप्रयोग	51
खंड 2	**उपभोक्ता व्यवहार का सिद्धांत**	
इकाई 4	उपभोक्ता व्यवहार : गणनावाचक दृष्टिकोण	73
इकाई 5	उपभोक्ता व्यवहार : क्रमवाचक दृष्टिकोण	92
खंड 3	**उत्पादन एवं लागतें**	
इकाई 6	एक परिवर्ती आगत का उत्पादन फलन	129
इकाई 7	दो एवं दो से अधिक आगतों का उत्पादन फलन	142
इकाई 8	लागत फलन	172
खंड 4	**बाज़ार संरचना**	
इकाई 9	पूर्ण प्रतियोगिता : फर्म एवं उद्योग के संतुलन	203
इकाई 10	एकाधिकार : कीमत एवं उत्पादन निर्णय	223
इकाई 11	एकाधिकारिक प्रतियोगिता : कीमत एवं उत्पादन निर्णय	246
इकाई 12	अल्पाधिकार : कीमत एवं उत्पादन निर्णय	264
खंड 5	**साधन बाज़ार**	
इकाई 13	साधन बाज़ार : साधन कीमत निर्धारण	291
इकाई 14	श्रम बाज़ार	306
इकाई 15	भूमि बाज़ार	319
खंड 6	**आर्थिक क्षेम : बाज़ार की विफलता एवं राज्य की भूमिका**	
इकाई 16	आर्थिक क्षेम : पूर्ण प्रतियोगिता के अंतर्गत आवंटनात्मक दक्षता	333
इकाई 17	बाज़ार तंत्र की दक्षता : बाज़ार की विफलता एवं राज्य की भूमिका	347
शब्दावली		358
कुछ उपयोगी पुस्तकें		369

ignou THE PEOPLE'S UNIVERSITY

प्रारंभिक व्यष्टि अर्थशास्त्र : परिचय

यह पाठ्यक्रम कला स्नातक (अर्थशास्त्र ऑनर्स) कार्यक्रम करने वाले छात्रों को व्यष्टि अर्थशास्त्र के आधारभूत सिद्धांतों से परिचय कराता है। इस पाठ्यक्रम का मुख्य उद्देश्य छात्रों के बीच व्यष्टि अर्थशास्त्र के मूलभूत सिद्धांतों की अवधारणात्मक आधारशिला रखना है ताकि वे माध्यामिक व्यष्टि अर्थशास्त्र-I एवं माध्यमिक व्यष्टि अर्थशास्त्र-II को भली-भाँति समझ सकें तथा इन सिद्धांतों का वास्तविक जीवन की घटनाओं के विश्लेषण में अनुप्रयोग कर सकें।

अर्थशास्त्र एक प्रयोगात्मक एवं व्यावहारिक विषय है। इस विषय का सैद्धांतिक ज्ञान विभिन्न आर्थिक अभिकर्ताओं को इस प्रकार के निर्णय लेने में मदद करता है : किन वस्तुओं का उत्पादन करना है? वस्तुओं का उत्पादन किस प्रकार करना है? उत्पादन में किन तकनीकों का प्रयोग करना है? उत्पादन प्रक्रिया में किन कारकों अथवा संशोधनों का तथा किन संयोगों में प्रयोग करना है? उपभोक्ता वस्तुओं के क्रय संबंधी निर्णय किस प्रकार लेते हैं तथा उनके चयन संबंधी निर्णय कीमतों एवं आय में हुए परिवर्तनों से किस प्रकार प्रभावित होते हैं? फर्म कैसे तय करती है कि कितने श्रमिकों को काम पर लगाया जाय और श्रमिक कैसे यह तय करते हैं कि कहाँ उन्हें कार्य करना है और कब तक करना है? दूसरे शब्दों में, अर्थशास्त्र का विषय क्षेत्र राज्य की क्रियाओं के वित्तीयन से बढ़कर आम व्यक्ति के दैनिक जीवन में महत्त्वपूर्ण निर्णय लेने में मदद करने तक पहुँच गया है।

आज अर्थशास्त्र के विषय क्षेत्र में बहुत-सी गतिविधियाँ सम्मिलित हो गयी हैं। इन गतिविधियों में शामिल हैं– (क) उपभोक्ता का व्यवहार या चयन प्रक्रिया; (ख) उत्पादक का व्यवहार अथवा उत्पादन क्रिया का आयोजन एवं संचालन किस प्रकार किया जाता है? (ग) बाज़ार के विविध रूप क्या होते हैं? (घ) विभिन्न व्यक्ति उत्पादन प्रक्रिया में अपने स्वामित्व वाले साधनों द्वारा किस प्रकार अपना योगदान देते हैं? (ङ) विभिन्न प्रकार की कार्य-दक्षताएँ कौन-सी हैं, (च) किन परिस्थितियों में बाज़ार विफल होते हैं और इन परिस्थितियों में बाज़ार अपनी किस भूमिका का निर्वहन कर सकता है?

प्रस्तुत पाठ्यक्रम छात्रों को उक्त सभी मुद्दों से अवगत कराता है। यह पाठ्यक्रम **छह खंडों** में विभक्त है :

अर्थशास्त्र की प्रकृति से परिचय कराते हुए **खंड 1** माँग एवं आपूर्ति के आधारभूत सिद्धांतों से अवगत कराता है। साथ ही, इस बात की भी जानकारी प्रदान कराता है कि माँग एवं आपूर्ति के वक्र किस प्रकार बाज़ार प्रक्रिया का वर्णन करने में प्रयुक्त होते हैं। इस खंड में तीन इकाई हैं। अर्थशास्त्र एवं अर्थव्यवस्था का परिचय नामक **प्रथम इकाई में**, अर्थशास्त्र की मूलभूत प्रकृति तथा इस विषय में प्रयुक्त आधारभूत संकल्पनाओं एवं विधि को समाहित किया गया है। **इकाई 2 में,** माँग एवं आपूर्ति के सिद्धांत, माँग एवं आपूर्ति की लोच की अवधारणा उसके निर्धारक तथा उसके मापन को बताया गया है। **इकाई** 3 माँग तथा आपूर्ति को साथ लेकर बाज़ार प्रक्रिया की चर्चा करती है।

खंड 2 उपभोक्ता के सिद्धांत से संबंधित है और इसमें दो इकाइयाँ हैं। **इकाई 4** उपयोगिता मापन के गणनात्मक दृष्टिकोण से संबंध रखती है और इस बात का विश्लेषण करती है कि उपभोक्ता किस प्रकार सम-सीमांत उपयोगिता की मदद से संतुलन को प्राप्त करता है? **इकाई 5** में क्रमवाचक दृष्टिकोण के तहत उपभोक्ता व्यवहार का विश्लेषण किया गया है।

खंड 3 में, उत्पादन फलन एवं लागत सिद्धांत का विश्लेषण किया गया है। इसमें तीन इकाइयाँ हैं। **इकाई 6** एक परिवर्ती आगत वाले उत्पादन फलन पर प्रकाश डालती है। **इकाई 7 में** दो एवं इससे अधिक परिवर्ती आगतों वाले उत्पादन फलन की चर्चा की गई है।

इकाई 9 में विभिन्न प्रकार की लागतों को ध्यान में रखते हुए उत्पादन के लागत पक्ष की चर्चा की गई है।

खंड 4 बाज़ार के विभिन्न रूपों जैसे पूर्ण प्रतियोगिता, एकाधिकार, एकाधिकारात्मक प्रतियोगिता तथा अल्पाधिकार पर प्रकाश डालता है। इस खंड में चार इकाइयाँ हैं। पूर्ण प्रतियोगिता : फर्म एवं उद्योग में संतुलन नामक **नौवीं इकाई** पूर्ण प्रतियोगी बाज़ार की विशेषताओं पर प्रकाश डालते हुए इस बाज़ार के तहत फर्म एवं उद्योग के संतुलन की व्याख्या करती है। **इकाई 10** जिसका शीर्षक एकाधिकार : कीमत एवं उत्पादन निर्णयन है, के अंतर्गत एकाधिकार बाज़ार के कीमत विभेद की चर्चा की गई है। अल्पकाल एवं दीर्घकाल में एकाधिकारात्मक प्रतियोगिता के तहत संतुलन की शर्तें, अतिरेक क्षमता का सिद्धांत तथा विभिन्न बाज़ार रूपों की तलना **इकाई 11** में की गई है। अल्पाधिकार के अंतर्गत कीमत एवं उत्पादन का निर्धारण **इकाई 12** में प्रदान किया गया है।

खंड 5 उत्पादन साधनों की कीमत निर्धारण पर प्रकाश डालता है। इसमें तीन इकाइयाँ हैं। वितरण के सीमांत उत्पादकता सिद्धांत की चर्चा करते हुए **इकाई 13** लगान एवं मज़दूरी किस प्रकार निर्धारित होते हैं पर एक विहंगम दृष्टिकोण प्रदान करती है। इसमें ब्याज एवं लाभ के सिद्धांतों की भी संक्षेप में चर्चा की गई है। **इकाई 14** पूर्ण प्रतियोगी एवं अपूर्ण प्रतियोगी श्रम बाज़ार के तहत मज़दूरी निर्धारण में माँग एवं आपूर्ति प्रक्रियाओं से आपका परिचय कराती है। साथ ही श्रम संघों की भूमिका एवं मज़दूरी विभिन्नताओं का विश्लेषण भी इस इकाई में शामिल किया गया है। **इकाई 15** उत्पत्ति के साधन के रूप में भूमि की विशिष्टताएँ एवं लगान के विभिन्न सिद्धांतों पर प्रकाश डालती है।

खंड 6 में आर्थिक क्षेम बाज़ार की विफलता एवं राज्य की भूमिका को शामिल किया गया है। इस खंड में 2 इकाइयाँ हैं– **इकाई 16** छात्रों को पूर्ण प्रतियोगी बाज़ार के तहत कार्यक्षमताओं के विविध रूपों से परिचय कराती है और साथ ही यह भी स्पष्ट करती है कि पूर्ण प्रतियोगी बाज़ार की मान्यताओं से दूरी किस प्रकार के परिणाम देती है। **इकाई 17** उन विभिन्न परिस्थितियों की ओर इंगित करती है जहाँ बाज़ार विफल हो जाते हैं और इसी कारण राज्य को अपनी भूमिका का निर्वहन करना होता है।

खंड 3 उत्पादन एवं लागतें

खंड 3 उत्पादन एवं लागतें

खंड 3 में फर्म का सिद्धांत तथा उत्पादन के दौरान प्रयुक्त लागतों का विश्लेषण किया गया है। यह विश्लेषण आपको इस इस मुद्दे को जानने में सक्षम बनाएगा कि फर्में वस्तुओं एवं सेवाओं के उत्पादन में विभिन्न आगतों जैसे श्रम, पूँजी तथा कच्चे माल का संयोग किस प्रकार करें जिससे उत्पादन की लागत न्यूनतम हो सके। इस प्रक्रिया में विभिन्न अवधारणाओं जैसे उत्पादन फलन समोत्पाद वक्र, सम-लागत रेखाओं आदि की व्याख्या की गई है।

इस खंड में चार इकाइयाँ हैं। **इकाई 6** एक परिवर्ती आगत सहित उत्पादन फलन तथा परिवर्ती अनुपातों के नियम पर प्रकाश डालती है। **इकाई 7** में, समोत्पादन वक्रों की विशेषताओं, साधनों के अनुकूलतम संयोगों तथा उत्पादक के संतुलन को सम्मिलित किया गया है। उत्पादन के आर्थिक क्षेत्र कटक रेखाएं और विस्तार-पथ की चर्चा भी इस इकाई में की गई है। इस इकाई में सभी परिवर्ती आगतों वाले उत्पादन फलन और इसी कारण उत्पादन की प्रतिफल अवस्थाओं की प्रयोज्यता को भी सम्मिलित किया गया है। **इकाई 8** में विभिन्न प्रकार की लागतों को समझाते हुए उत्पादन के लागत पक्ष पर चर्चा की गई है।

ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY

इकाई 6 एक परिवर्ती आगत का उत्पादन फलन

संरचना

6.0 उद्देश्य

6.1 विषय प्रवेश

6.2 कुल, औसत तथा सीमांत उत्पाद

6.3 कुल, औसत तथा सीमांत उत्पाद वक्र

6.4 परिवर्ती अनुपात के नियम : साधन के प्रतिफल

6.4.1 उत्पादन की तीन अवस्थाएं

6.4.2 बढ़ते प्रतिफल की व्याख्या

6.4.3 स्थिर प्रतिफल की व्याख्या

6.4.4 घटते प्रतिफल की व्याख्या

6.5 सार-संक्षेप

6.6 संदर्भ ग्रंथादि

6.7 बोध प्रश्नों के उत्तर अथवा संकेत

6.0 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात, आप सक्षम होंगे :

- कुल उत्पाद, औसत उत्पाद तथा सीमांत उत्पाद की अवधारणा को बताने में;
- कुल उत्पाद वक्र, औसत उत्पाद वक्र तथा सीमांत उत्पाद वक्र की प्रकृति तथा संबंध की व्याख्या करने में;
- परिवर्ती अनुपात के नियम की प्रक्रिया के विश्लेषण में; तथा
- उत्पादन की तीन अवस्थाओं की पहचान करने में।

6.1 विषय प्रवेश

उत्पादन के लिए हमें उत्पादन के साधनों या आगतों के संयोग की आवश्यकता होती है। इन आगतों (जैसे श्रम, भूमि, पूँजी, कच्चा माल आदि) के संयुक्त प्रयासों से ही निर्गत (उत्पाद) का उत्पादन होता है। सामान्यतः उत्पादन परिवर्ती अनुपात की अवस्थाओं के अंतर्गत होता है जिसका अर्थ है कि आगतों की मात्रा का अनुपात बदलते रहना। उत्पादन के स्थिर अनुपात का अर्थ है कि एक वस्तु के उत्पादन के लिए आगतों का केवल एक ही अनुपात में प्रयोग होता है। उदाहरण के लिए, एक ट्रक को केवल एक चालक चलाता है। इस स्थिति में ट्रक तथा चालक का अनुपात, तकनीकी रूप से स्थिर है। इसे परिवर्तित करना उत्पादक की क्षमताओं से बाहर है। हालांकि, कृषि में भूमि तथा श्रम के अनुपात को बदला जा सकता है इसलिए इसे परिवर्ती अनुपात कहते हैं। अल्पकाल में सभी आगतें परिवर्ती नहीं होतीं, जबकि दीर्घकाल में सभी आगतें परिवर्ती होती हैं, आगतों के अनुपात को बदला जा सकता है। यह तकनीकी विकास की स्थिति है। इस इकाई में हम केवल अल्पकाल में उत्पादन पर केंद्रित रहेंगे। अल्पकाल में विश्लेषण के उद्देश्य से ऐसा माना जाता है कि केवल एक आगत परिवर्ती है तथा अन्य सभी आगतें स्थिर हैं। हम इसी चर्चा को जारी रखेंगे।

6.2 कुल, औसत तथा सीमांत उत्पाद

आरंभ में हम कुल, औसत तथा सीमांत उत्पाद अवधारणा की व्याख्या करेंगे। अल्पकाल उत्पादन फलन, चाहे वह एक तालिका में दर्शाया गया हो, एक आरेख या एक गणितीय समीकरण के रूप में, यह एक निश्चित मात्रा में स्थिर आगतों के साथ विभिन्न मात्रा में परिवर्ती आगतों से होने वाले कुल उत्पाद को दर्शाता है। आओ ऐसी स्थिति की चर्चा करते हैं जिसमें पूँजी आगत स्थिर है लेकिन श्रम आगत परिवर्ती है जिससे फर्म केवल श्रम आगत में वृद्धि करके उत्पादन को बढ़ा सकती है। उदाहरण के लिए, एक वस्त्र निर्माण फर्म। इसके पास स्थिर मात्रा में मशीनें हैं लेकिन वह इन मशीनों को चलाने के लिए कम या ज्यादा श्रम को रख सकता है। कोई भी निर्णय लेने के लिए फर्म के प्रबंधक (या स्वामी) को यह पता होना चाहिए कि श्रम आगत में वृद्धि करने पर कुल निर्गत या उत्पाद मात्रा में कैसे वृद्धि होगी? तालिका 6.1 उत्पाद फलन के विषय में यह सूचना प्रदान करती है।

तालिका 6.1 पूँजी की 5 इकाइयों तथा श्रम की विभिन्न मात्रा से उत्पादित उत्पादन को दर्शाती है। पहला स्तंभ (कालॅम) पूँजी की स्थिर मात्रा दर्शाता है, दूसरा स्तंभ (कालॅम) श्रम की मात्रा की 0 से 10 इकाइयाँ दर्शाता है तथा तीसरा, कुल उत्पाद या निर्गत को दर्शाता है। तालिका से यह स्पष्ट है कि जब श्रम आगत शून्य है, तब निर्गत या उत्पाद भी शून्य है, क्योंकि, पूँजी अकेले कुछ उत्पादन नहीं कर सकती। श्रम आगत की 6 इकाइयों तक, कुल उत्पाद बढ़ती दर से बढ़ता है। तत्पश्चात् श्रम आगत में वृद्धि होने पर, वह घटती दर से बढ़ता है। श्रम आगत की आठवीं इकाई उत्पादन में कोई वृद्धि नहीं करती। फर्म चाहे पूँजी आगत की स्थिर इकाइयों के साथ श्रम की सात इकाइयों या आठ इकाइयों का प्रयोग करें, कुल उत्पाद 224 इकाइयों पर स्थिर रहता है। इस बिंदु के पश्चात, श्रम आगत की अधिक इकाइयों का प्रयोग करने से उत्पादन पर विपरीत असर पड़ता है क्योंकि उत्पादन, श्रम की इकाइयों के बढ़ाने पर घटने लगता है।

तालिका 6.1 : एक परिवर्ती आगत से उत्पादन

पूँजी की मात्रा (K)	श्रम की मात्रा (L)	कुल उत्पाद (Q)	औसत उत्पाद (Q/L)	सीमांत उत्पाद $\Delta Q/\Delta L$)
5	0	0	–	–
5	1	20	20	20
5	2	60	30	40
5	3	120	40	60
5	4	160	40	40
5	5	190	38	30
5	6	216	36	26
5	7	224	32	8
5	8	224	28	0
5	9	216	24	–8
5	10	200	20	–16

हालांकि तालिका 6.1 में दिए गए आंकड़े काल्पनिक हैं, किंतु ये जिस सामान्य संबंध को दर्शा रहे हैं, वे सार्वभौमिक हैं। इस संबंध की आगे व्याख्या करने के लिए, हम एक आगत के औसत उत्पाद की अवधारणा तथा सीमांत उत्पाद की अवधारणा को जानने का प्रयास करते हैं। एक आगत के कुल उत्पाद को आगत की संख्या से भाग करने पर प्राप्त मात्रा को, उसे आगत के औसत उत्पाद या औसत भौतिक उत्पाद के रूप में

परिभाषित किया जा सकता है। उदाहरणार्थ, श्रम आगत की चार इकाइयाँ, उत्पाद की 160 इकाइयाँ उत्पादित करती हैं, तो श्रम का औसत उत्पाद 40 इकाइयाँ प्रति श्रमिक है। सामान्य तौर पर हम कह सकते हैं

$$AP_L = \frac{Q}{L}$$

यहां, AP_L = श्रम का औसत उत्पाद

Q = कुल उत्पाद

L = श्रम की मात्रा

तालिका 6.1 का स्तंभ 4, श्रम का औसत उत्पाद दर्शाता है। श्रम की प्रत्येक इकाई के लिए औसत उत्पाद की गणना स्तंभ 3 में दर्शाए गए कुल उत्पाद को स्तंभ 2 में दिए गए श्रम की मात्रा से भाग कर प्राप्त किया जा सकता है। इस उदाहरण में श्रम का औसत उत्पाद, आरंभ में बढ़ता है किंतु जब श्रम आगत 4 इकाइयों से अधिक हो जाता है, तो यह घटने लगता है।

एक आगत के सीमांत उत्पाद या सीमांत भौतिक उत्पाद को, अन्य आगतों को स्थिर रखते हुए श्रम की एक इकाई की वृद्धि होने पर, कुल उत्पाद में होने वाले परिवर्तन के रूप में परिभाषित किया जा सकता है। उदाहरण के लिए, पूँजी की 5 इकाइयाँ स्थिर रहने पर जब श्रम की मात्रा 3 इकाइयों से बढ़कर 4 इकाइयाँ होती हैं, तब कुल उत्पाद 120 इकाइयों से बढ़कर 160 इकाइयाँ हो जाता है या 40 इकाइयाँ बढ़ जाता है। इस प्रकार श्रम का सीमांत उत्पाद, जब श्रम आगत की चौथी इकाई लगाई जाती है, 40 इकाइयाँ हैं। इस प्रकार हम कह सकते हैं।

$$MP_L = \frac{\Delta Q}{\Delta L}$$

यहां, MP_L = श्रम का सीमांत उत्पाद

ΔQ = उत्पाद में परिवर्तन

ΔL = श्रम आगत में परिवर्तन

तालिका 6.1 में, पांचवा स्तंभ, श्रम का सीमांत उत्पाद दर्शाता है। यहां ध्यान देने वाली बात है कि औसत उत्पाद की तरह सीमांत उत्पाद आरंभ में बढ़ता है, फिर गिरता है और अंत में ऋणात्मक हो जाता है। दिए गए उदाहरण में जब श्रम आगत की मात्रा 8 इकाइयों से अधिक हो जाती है, तब श्रम का सीमांत उत्पाद ऋणात्मक हो जाता है। ऐसा तब होता है जब स्थिर आगत के साथ परिवर्ती आगत को अधिक प्रयोग किया जाता है।

जब औसत उत्पाद बढ़ रहा होता है सीमांत उत्पाद औसत उत्पाद से अधिक होता है, जब औसत उत्पाद अधिकतम है सीमांत उत्पाद, औसत उत्पाद के समान होता है और सीमांत उत्पाद औसत उत्पाद से कम होता है तो औसत उत्पाद घटता है।

वास्तव में यह कथन सीमांत और औसत के सभी संबंधों के लिये सत्य है।

6.3 कुल, औसत तथा सीमांत उत्पाद वक्र

चित्र 6.1 में तालिका 6.1 में दी गई सूचना का रेखांकन किया गया है।

चित्र 6.1 की रचना करते समय यह मान्यता रही है कि श्रम आगत तथा उत्पाद छोटी छोटी इकाइयों में विभाजित किया जा सकता है जिससे संबंध विभक्त बिंदुओं की बजाय

सतत वक्रों में हो। चित्र 6.1 में दर्शाया गया कुल उत्पाद वक्र दर्शाता है कि कुल उत्पाद उत्पादन में प्रयोग की गई श्रम आगत की मात्रा के साथ परिवर्तित होता है। जैसा तालिका 6.1 में दर्शाया गया है, चित्र 6.1a भी दर्शाता है कि आरंभ में श्रम आगत की मात्रा बढ़ाने पर कुल उत्पाद बिंदु E तक बढ़ती दर से बढ़ता है। बिंदु E जहां कुल उत्पाद बढ़ती दर से बढ़ना बंद करता है, तथा घटती दर से बढ़ना आरंभ करता है, नति परिवर्तक बिंदु (inflexion point) कहलाता है। जब श्रम आगत की 7 इकाइयाँ प्रयोग होती हैं। कुल उत्पाद अधिकतम 224 इकाइयों के स्तर पर पहुंच जाता है। इस अवस्था में, श्रम आगत की मात्रा बढ़ाने पर कुल उत्पाद में कोई वृद्धि नहीं होती। इस बिंदु से आगे श्रम आगत की अधिक इकाइयों के प्रयोग के परिणामस्वरूप, कुल उत्पाद में कमी होती है।

बिंदुओं से दर्शाया गया कुल उत्पाद वक्र (IP) का भाग, श्रम आगत की इकाइयों में वृद्धि के परिणामस्वरूप, उत्पाद में कमी को दर्शाता है। चित्र 6.1 (a) में श्रम आगत जब आठवीं इकाई से आगे बढ़ाया जाता है, तब उत्पाद गिरता है जिसका अर्थ है कि उत्पादन तकनीकी रूप से कुशल नहीं है तथा यह उत्पादन फलन का हिस्सा नहीं है।

चित्र 6.1b श्रम का औसत तथा सीमांत उत्पाद दर्शाता है (लंबवत अक्ष की इकाइयों को उत्पादन प्रति समय अवधि से उत्पादन प्रति श्रम इकाई में बदल दिया गया है)। अतः, औसत उत्पाद तथा सीमांत उत्पाद वक्र, श्रम की प्रति इकाई उत्पाद को मापते हैं। यह ध्यान देने योग्य है कि जैसे-जैसे आगत में वृद्धि होती है, आरंभ में श्रम का सीमांत उत्पाद बढ़ता है, श्रम की 3 इकाइयों पर अधिकतम पर पहुंच जाता है तथा उसके पश्चात घटता है। इस उदाहरण में, श्रम का सीमांत उत्पाद, श्रम की आठवीं इकाई पर शून्य हो जाता है तथा उसके पश्चात् ऋणात्मक होता है। हालांकि तकनीकी कुशलता, ऋणात्मक सीमांत उत्पाद की संभावना को स्वीकार नहीं करती तथा इसलिए उत्पादन फलन का हिस्सा नहीं है। श्रम का औसत उत्पाद भी आरंभ में बढ़ता है, श्रम आगत की 4 इकाइयों पर अधिकतम होता है तथा फिर घटता है।

सीमांत उत्पाद वक्र (MP) तथा औसत उत्पाद वक्र (AP) में संबंध

आइए, अब हम सीमांत तथा औसत उत्पाद वक्रों के बीच संबंध को जानें। यह सभी सीमांत तथा औसत वक्रों के लिए सत्य है, सीमांत तथा औसत उत्पाद वक्रों के बीच एक निश्चित संबंध होता है।

i) जब सीमांत उत्पाद बढ़ता है औसत उत्पाद भी बढ़ता है हालांकि बढ़ने की दर, सीमांत उत्पाद की दर से कम होती है। इस संदर्भ में यह ध्यान देना महत्त्वपूर्ण है कि जब सीमांत उत्पाद घटना आरंभ कर देता है, किंतु औसत उत्पाद से अधिक होता है, तब औसत उत्पाद बढ़ता रहता है।

ii) जब औसत उत्पाद अधिकतम होता है सीमांत उत्पाद इसके समान होता है। यही कारण है कि सीमांत उत्पाद वक्र, औसत उत्पाद वक्र को, उसके अधिकतम बिंदु पर काटता है।

iii) इस बिंदु के पश्चात जब सीमांत उत्पाद घटता है, यह औसत उत्पाद को भी नीचे खींच ले जाता है। हालांकि, औसत उत्पाद के घटने की दर, सीमांत उत्पाद की घटने की दर से कम रहती है।

चित्र 6.1 के ऊपरी भाग में श्रम का कुल उत्पाद वक्र (TP) दर्शाया है। चित्र के निचले भाग में दर्शाया गया श्रम का औसत उत्पाद वक्र (AP) तथा श्रम का सीमांत उत्पाद वक्र (MP), ऊपरी भाग में दी गई सूचनाओं से प्राप्त किया गया है।

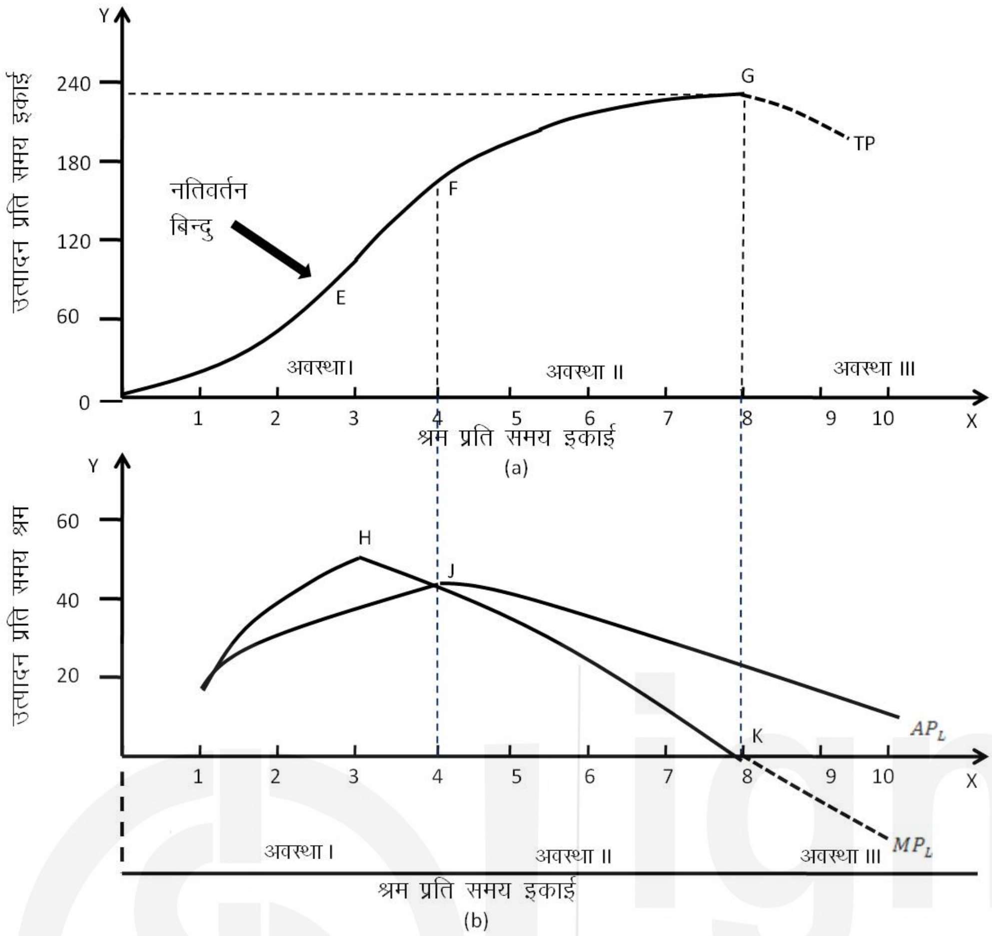

चित्र 6.1 : एक परिवर्ती आगत (श्रम) से उत्पादन

कुल उत्पाद तथा सीमांत उत्पाद वक्र के बीच संबंध

कुल उत्पाद वक्र तथा सीमांत उत्पाद वक्र के बीच संबंध निम्न प्रकार है :

1) जब तक सीमांत उत्पाद धनात्मक है, कुल उत्पाद वक्र लगातार बढ़ता है।

2) जब सीमांत उत्पाद शून्य है, कुल उत्पाद वक्र अपने अधिकतम बिंदु पर पहुंचता है। ध्यान दीजिए जब श्रम की आठवीं इकाई लगाई गई श्रम का सीमांत उत्पाद शून्य हो जाता है तथा उत्पाद अधिकतम है।

इसके पश्चात, श्रम का सीमांत उत्पाद ऋणात्मक हो जाता है तथा कुल उत्पाद वक्र नीचे की ओर ढालू हो जाता है जिसका अर्थ है, कुल उत्पाद घटता है।

बोध प्रश्न 1

1) इन कथनों में सत्य तथा असत्य बताइए :

   i) सीमांत उत्पाद औसत उत्पाद से अधिक होगा, जब औसत उत्पाद घट रहा है।

   ii) जब तक सीमांत उत्पाद बढ़ता है, कुल उत्पाद वक्र लगातार बढ़ता है।

2) सीमांत तथा औसत उत्पाद वक्रों के बीच संबंधों की चर्चा कीजिए।

....

....

....

6.4 परिवर्ती अनुपात के नियम : साधन के प्रतिफल

उत्पादन परिस्थितियों की जानकारी हमें बताती है कि अन्य सभी आगतों की मात्रा स्थिर रखते हुए, जब कुछ परिवर्ती आगतों की मात्रा को बढ़ाया जाता है, सामान्यतः परिवर्ती आगत का सीमांत तथा औसत उत्पाद एक बिंदु तक बढ़ता है। इसके पश्चात्, सीमांत उत्पाद घटता है तथा यह औसत उत्पाद को भी नीचे की ओर खींचता है। उत्पादन प्रक्रिया में सामान्यतः भूमि, पूँजीगत उपकरण तथा भवन अल्पकाल में स्थिर रहते हैं, जबकि श्रम तथा कच्चे माल की मात्रा सरलता से परिवर्तित होती है। हालांकि हम एक ऐसी स्थिति का अध्ययन करेंगे जहां पूँजी की मात्रा स्थिर है तथा केवल श्रम की मात्रा बढ़ती है।

i) इस स्थिति में, आरंभ में जब श्रम की मात्रा बढ़ती है, श्रम का सीमांत उत्पाद बढ़ता है तथा सीमांत उत्पाद अपने साथ औसत उत्पाद को भी बढ़ाता है। इस स्थिति में, कुल उत्पाद बढ़ती दर से बढ़ता है।

ii) यदि परिवर्ती आगत, जैसे श्रम में आगे भी वृद्धि होती है, तब सीमांत उत्पाद एक बिंदु के पश्चात् बढ़ना बंद कर देता है। परिणामस्वरूप कुल उत्पाद में बढ़ने की दर भी घटने की प्रवृत्ति दर्शाती है।

iii) अंततः, सीमांत उत्पाद ऋणात्मक हो जाता है तथा इस कारण कुल उत्पाद भी घटने लगता है।

अल्पकाल में, तकनीक में परिवर्तन संभव नहीं होता, इसलिए एक बिंदु के पश्चात्, सीमांत उत्पाद के घटने की प्रवृति को टाला नहीं जा सकता। जब दिए गए स्थिर साधनों की मात्रा के साथ, परिवर्ती साधन की मात्रा के प्रयोग में परिवर्तन होता है, तब इसके परिणामस्वरूप सीमांत उत्पाद की प्रवृत्ति के विवरण को, घटते प्रतिफल का नियम कहते हैं। यह परिवर्ती अनुपात का नियम भी कहलाता है क्योंकि यह प्रयोग किए गए उत्पादन के साधनों के अनुपात में परिवर्तन होने के परिणामों का अनुमान लगाता है। हम परिवर्ती अनुपात के नियम को निम्न प्रकार कह सकते हैं।

''जब एक आगत में समान मात्रा में वृद्धि होती है तथा अन्य आगतों की उत्पादन सेवाओं को समान रखा जाता है तब एक निश्चित बिंदु के बाद उत्पादन में होने वाली वृद्धि घटती है, अर्थात सीमांत उत्पाद घटता है।''

परिवर्ती अनुपात के नियम को तालिका 6.1 की सहायता से तथा चित्र 6.1, जो तालिका 6.1 में दिए गए उदाहरण के आधार पर बनाया गया है, की सहायता से सरलता से समझा जा सकता है। तालिका 6.1 में यह माना गया है कि पूँजी एक स्थिर साधन है तथा इसकी मात्रा 5 इकाइयों पर स्थिर रहती है। श्रम एक परिवर्ती साधन है, तथा इसकी मात्रा 1 इकाई से 10 इकाइयों तक बढ़ती है। तालिका 6.1 में यह देखा जा सकता है :

1) जैसे श्रम की मात्रा बढ़ती है, कुल उत्पाद भी श्रम की सातवीं इकाई तक बढ़ता है। आरंभ में उत्पादन में वृद्धि बढ़ती दर से होती है क्योंकि सीमांत उत्पाद बढ़ता है। यह प्रवृत्ति बिंदु E तक देखी जा सकती है जहां सीमांत उत्पाद अपने अधिकतम पर पहुंचता है। बिंदु E पर, जो नति परिवर्तक बिंदु है, कुल उत्पाद में वृद्धि की दर बढ़ती हुई से घटती हुई में बदल जाती है क्योंकि सीमांत उत्पाद घटना आरंभ करता हैं। हालांकि, औसत उत्पाद तब तक लगातार बढ़ता है जब तक यह अपने अधिकतम पर नहीं पहुंचता है जो कुल उत्पाद वक्र पर बिंदु F है (औसत उत्पाद वक्र पर बिंदु J है)।

2) जब श्रम की मात्रा में आगे वृद्धि होती है, कुल उत्पाद में वृद्धि जारी रहती है, लेकिन, घटती दर से। औसत उत्पाद तथा सीमांत उत्पाद दोनों धनात्मक रहते हैं,

लेकिन दोनों घटते हैं। इस प्रकार, कुल उत्पाद अपने अधिकतम पर पहुंचता है जो बिंदु G है तथा सीमांत उत्पाद शून्य हो जाता है (चित्र 6.1ख में बिंदु K देखें)। औसत उत्पाद, इस दौरान, धनात्मक रहता है किंतु लगातार घटता है।

3) इस बिंदु के पश्चात, श्रम की अधिक मात्रा लगाकर उत्पादन में वृद्धि का कोई भी प्रयास फलदायक नहीं होता। वास्तव में, यह उत्पादन के प्रतिकूल होता है क्योंकि सीमांत उत्पादक ऋणात्मक होता है जिसके परिणामस्वरूप कुल उत्पाद घटता है।

चित्र 6.1 मे दर्शाए गए उत्पाद वक्र, स्थिर तथा परिवर्ती आगतों के उत्पादन फलन का सामान्य प्रस्तुतिकरण है।

कुछ विशेष परिस्थितियों को, उदाहरण द्वारा समझाने के लिए, इस प्रकार के उत्पाद वक्र बनाए जा सकते हैं, हालांकि प्रत्येक, अन्य से, किसी रूप में भिन्न होगा। बढ़ते सीमांत उत्पाद की अवस्था दीर्घ हो सकती हैं, लघु हो सकती है, यह पूरी तरह अनुपस्थित भी हो सकती है। इसके अतिरिक्त, जब सीमांत उत्पाद घटता है, उसके घटने की दर प्रत्येक स्थिति में भिन्न हो सकती है। तालिका 6.2 परिवर्ती अनुपात के नियम का सारांश है।

तालिका 6.2 : उत्पाद वक्रों के गुण

कुल उत्पाद	सीमांत उत्पाद	औसत उत्पाद	चित्र 6.1
प्रथम अवस्था आरंभ में बढ़ती दर से बढ़ता है	बढ़ता है	बढ़ता है	बिंदु E तक
इसके पश्चात बढ़ने की दर बढ़ती से परिवर्तित होकर घटती है	अधिकतम पर पहुंचता है तथा इसके पश्चात घटना आरंभ होता है	लगातार बढ़ता है	बिंदु E तथा H पर
द्वितीय अवस्था घटती दर से बढ़ना जारी है	घटना जारी है	अधिकतम पर पहुंचता है जो यह सीमांत उत्पाद के समान है तथा घटना आरंभ होता है	बिंदु F तथा J पर
अधिकतम पर पहुंचता है तथा इसके पश्चात घटना आरंभ होता है	शून्य हो जाता है	घटना जारी है	बिंदु G तथा K पर
तृतीय अवस्था घटता है	ऋणात्मक है	घटना जारी है	बिंदु J तथा K के दाई ओर

6.4.1 उत्पादन की तीन अवस्थाएं

सामान्यतः जब परिवर्ती आगत की मात्रा में विस्तार किया जाता है, सीमांत उत्पाद आरंभ में बढ़ता है, और उसके उपरांत घटता है तथा उत्पाद वक्रों का आकार चित्र 6.1 में दर्शाए अनुसार होता है। परंपरागत तौर पर, इन उत्पाद वक्रों को तीन भागों में बांटा जाता है, अवस्था I, II तथा III जैसे चित्र 6.1 में दर्शाया गया है।

अवस्था-I की मुख्य विशेषता औसत उत्पाद का बढ़ना है। हमारे उदाहरण में, अवस्था-I तब होती है जब श्रम की 1 से 4 इकाइयाँ लगाई जाती हैं। अवस्था-I में, कुल उत्पाद आरंभ में बढ़ती दर से बढ़ता है तथा सीमांत उत्पाद भी बढ़ता है। सीमांत उत्पाद अपने अधिकतम पर पहुंचता है जब श्रम आगत की 3 इकाइयाँ हैं। जब श्रम आगत की चौथी

इकाई लगाई जाती है, घटते प्रतिफल लागू होते हैं। इसका अर्थ है कि कुल उत्पाद घटती दर से बढ़ता है तथा सीमांत उत्पाद घटता है।

अवस्था-II में, कुल उत्पाद घटती दर से बढ़ता है तथा सीमांत उत्पाद और औसत उत्पाद दोनों घटते हैं। सीमांत उत्पाद औसत उत्पाद से कम होने के कारण, औसत उत्पाद को नीचे की ओर खींचता है। द्वितीय अवस्था की दाएं ओर की सीमा कुल उत्पाद का अधिकतम बिंदु है, जहां सीमांत उत्पाद शून्य पर पहुंच जाता है। हमारे उदाहरण में, दूसरी अवस्था श्रम की 4 से 8 इकाइयों के मध्य है।

अवस्था-III में, कुल उत्पाद घटता है तथा सीमांत उत्पाद ऋणात्मक है। हमारे उदाहरण में, तीसरी अवस्था तब लागू होती है जब श्रम की मात्रा 8 इकाइयों से अधिक होती है।

परिचालन की वास्तविक अवस्था

एक विवेकशील उत्पादक, दूसरी अवस्था में परिचालन (उत्पादन) करेगा। यह समझना मुश्किल नहीं है कि उत्पादन तीसरी अवस्था में क्यों नहीं होगा। तीसरी अवस्था में, परिवर्ती लागत की अधिक मात्रा का प्रयोग करने पर भी, कम उत्पाद का उत्पादन होगा।

प्रथम अवस्था में, परिवर्ती आगत का औसत उत्पाद बढ़ता है। इस प्रकार, यदि परिवर्ती आगत की मात्रा को दोगुना किया जाता है, उत्पादन दोगुने से ज्यादा होता है तथा उत्पादन की प्रति इकाई घटती है। यदि एक फर्म, जो प्रतियोगी बाज़ार में कार्य कर रही है, यह इस अवस्था में उत्पादन करने से बचेगी क्योंकि उत्पादन को बढ़ाने से, इसकी प्रति इकाई लागत घटती है जबकि प्रत्येक अतिरिक्त इकाई के बेचने से मिलने वाली कीमत समान रहती है। इसका अर्थ है, यदि उत्पादन में वृद्धि औसत उत्पाद की वृद्धि की अवस्था से आगे भी जारी रहती है, तो कुल लाभ में भी वृद्धि होती है।

संक्षेप में हम कह सकते हैं, कि आरंभ में, परिवर्ती आगत श्रम, स्थिर आगतों की पूरी क्षमता का प्रयोग करने में सक्षम नहीं होता, इसलिए सीमांत उत्पाद तथा औसत उत्पाद कम रहता है। उदाहरण के लिए, एक श्रमिक, एक हेक्टेयर भूमि की पूरी क्षमता का प्रयोग करने में सक्षम नहीं होता। लेकिन दो श्रमिक, एक साथ मिलकर इस भूमि पर कार्य करने में बेहतर स्थिति में होंगे। इसलिए जब श्रम आगत की मात्रा में एक इकाई से दो इकाई तक वृद्धि होती है, तब सीमांत उत्पाद में वृद्धि होती है।

अतः कोई विवेकशील उत्पादक, केवल दूसरी अवस्था में उत्पादन करता है, जब घटते प्रतिफल के नियम लागू होते हैं। यही कारण है कि परिवर्ती अनुपात के नियम को, साधन के घटते सीमांत प्रतिफल के नियम भी कहते हैं।

6.4.2 बढ़ते प्रतिफल की व्याख्या

आधुनिक अर्थशास्त्रियों के अनुसार, जब उत्पादन की आरंभिक अवस्था में, परिवर्तित आगत की मात्रा में वृद्धि होती है, उत्पादन में बढ़ते प्रतिफल की प्रवृत्ति लागू होती है। प्राचीन अर्थशास्त्रियों ने भी इस प्रवृत्ति का पर्यवेक्षण किया है तथा इसे बढ़ते प्रतिफल के नियम का नाम दिया है। हालांकि, उन्होंने यह महसूस किया कि यह नियम, केवल निर्माण उद्योगों में लागू होता है। इसके विपरीत, आधुनिक अर्थशास्त्री मानते हैं कि यह नियम आर्थिक क्रिया के किसी भी क्षेत्र में लागू होता है। इस संदर्भ में मार्शल (पूर्व स्थिति के प्रतिनिधि) तथा जॉन रॉबिंसन (बाद की स्थिति के प्रतिनिधि) के विचार नीचे दिए गए हैं—

मार्शल की राय में, बढ़ते प्रतिफल की प्रवृत्ति केवल निर्माण उद्योग में लागू होती है। उनका विश्वास था कि श्रम की मात्रा तथा पूँजी की मात्रा, निर्माण उद्योग में बढ़ाई जाती है, उत्पादन के पैमाने में विस्तार होता है तथा यह उत्पादन के बेहतर संगठन की ओर अग्रसर होता है। मार्शल के शब्दों में :

> **"श्रम तथा पूँजी में वृद्धि सामान्यतः बेहतर संगठन की ओर अग्रसर होती है, जिससे श्रम तथा पूँजी की कार्य कुशलता में वृद्धि होती है... उन सभी उद्योगों में जो कच्चे उत्पाद को बढ़ाने में शामिल नहीं है, श्रम तथा पूँजी में वृद्धि सामान्यतः अनुपात से अधिक प्रतिफल देते हैं।"**

जॉन रॉबिंसन द्वारा दी गई बढ़ते प्रतिफल की प्रवृत्ति की व्याख्या अधिक वैज्ञानिक है। वह कहती है :

> **"जब किसी एक निश्चित कार्य के लिए लगाए गए उत्पादन के साधन की मात्रा में वृद्धि की जाती है, तो अधिकतर ऐसा होता है कि साधन की प्राकृतिक इकाई अधिक कुशल हो जाती है, अतः उत्पादन में वृद्धि के लिए यह आवश्यक नहीं है कि साधनों की भौतिक मात्रा में आनुपातिक वृद्धि की जाए।"**

जॉन रॉबिंसन के द्वारा ऊपर दिए कथन से यह स्पष्ट है :

1) बढ़ते प्रतिफल की प्रवृत्ति केवल निर्माण उद्योगों में ही नहीं अपितु सभी उत्पादन क्रियाओं में लागू होती है, इस प्रवृत्ति के लागू होने को केवल निर्माण उद्योग तक सीमित करना गलत होगा।

2) बढ़ते प्रतिफल की प्रवृत्ति लागू होती है क्योंकि उत्पादन के साधनों की कुशलता में सुधार होता है।

आइए, अब हम बढ़ते प्रतिफल की प्रवृत्ति के लागू होने के कारणों को विस्तार से जानें।

1) **उत्पादन के साधनों का अनुकूलतम संयोजन**

जॉन रॉबिंसन के अनुसार, कुछ अविभाज्य साधनों का पूर्ण दोहन, तब तक संभव नहीं है, जब तक कुछ अन्य उत्पादन के साधनों का अधिक प्रयोग न हो। इस प्रकार, यदि एक उत्पादक उत्पादन के विभिन्न साधनों की कम मात्रा को लगाता है, इनके बीच में, सर्वोत्तम अनुपात की स्थापना नहीं होती तथा उत्पादन का स्तर नीचे रहता है। जब वह उत्पादन के उन साधनों की मात्रा में वृद्धि करता है, जो कम मात्रा में लगाए गए थे (अनुकूलतम के लिए आवश्यक की तुलना में), सीमांत उत्पाद बढ़ता है जब तक उस बिंदु पर नहीं पहुंचता जहां साधनों का संयोजन अनुकूलतम अनुपात में है। निश्चय ही, इस बिंदु पर, उत्पादन का स्तर अधिकतम है।

2) **स्थिर साधनों का बड़ा आकार**

जब उत्पादन में उपयोग किए गए स्थिर साधनों की मात्रा बहुत बड़ी होती है, और परिवर्ती साधन की मात्रा बहुत कम तो कुशलता का स्तर कम रहता है। जैसे-जैसे परिवर्ती साधन की अधिक मात्रा को उत्पादन में लगाया जाता है, सीमांत उत्पादकता बढ़ती है (क्योंकि कुशलता का स्तर भी बढ़ता है)। उदाहरण के लिए, यदि 10 हेक्टेयर जमीन के खेत में एक ही व्यक्ति कार्य कर रहा है, उसकी उत्पादकता बहुत कम होगी। जैसे-जैसे श्रमिकों की संख्या बढ़ती है, श्रम का विभाजन तथा विशेषज्ञता बढ़ते प्रतिफल की ओर अग्रसर होती है, तथा सीमांत उत्पाद तेजी से बढ़ता है।

6.4.3 स्थिर प्रतिफल की व्याख्या

यदि एक फर्म में उत्पादन के परिवर्ती साधनों की मात्रा को लगातार बढ़ाने पर भी, सीमांत उत्पाद न बढ़ता है और न ही घटता है लेकिन स्थिर रहता है, तो स्थिर प्रतिफल की प्रवृत्ति लागू होगी। वास्तव में, ऐसा कोई उद्योग नहीं है जिसमें उत्पादन के परिवर्ती साधनों में वृद्धि करने पर, स्थिर प्रतिफल प्राप्त होते हैं। मार्शल के अनुसार,

ignou THE PEOPLE'S UNIVERSITY

"यदि बढ़ते तथा घटते प्रतिफल के नियम को संतुलित कर लिया जाए, तब हमें स्थिर प्रतिफल के नियम प्राप्त होंगे।''

मार्शल यह महसूस करते हैं प्रतिफल के नियम बहुत सीमित रूप और सीमा तक लागू होते हैं। उनके अनुसार, यह नियम केवल तब लागू होता है, जब बढ़ते प्रतिफल की प्रवृत्ति तथा घटते प्रतिफल की प्रवृत्ति में एक संतुलन होता है। हालांकि आधुनिक अर्थशास्त्री मानते हैं कि स्थिर प्रतिफल के नियम लागू होने का क्षेत्र काफी बड़ा है। उनके अनुसार, स्थिर प्रतिफल की प्रवृत्ति, सामान्यतः घटते प्रतिफल की प्रवृत्ति के लागू होने से पहले पाई जाती है। उत्पादन क्रिया के किसी भी क्षेत्र में, बढ़ते प्रतिफल, हमेशा प्राप्त नहीं किए जा सकते। चाहे वह कृषि हो, निर्माण उद्योग हो या अन्य कोई उत्पादन क्रिया। बढ़ते प्रतिफल की प्रवृत्ति, केवल एक निश्चित सीमा तक ही लागू होती है। उस सीमा पर पहुंचने के पश्चात, कुछ समय के लिए, स्थिर प्रतिफल का नियम लागू होता है। उत्पादन की दृष्टि से, यह एक महत्त्वपूर्ण अवस्था है, क्योंकि यह उत्पादन के साधनों के अनुकूलतम संयोजन को दर्शाता है। इस अवस्था में, सीमांत लागत न्यूनतम होती है। यह दो कारणों से होता है। पहला, स्थिर प्रतिफल की अवस्था तब प्राप्त होती है, जब बढ़ते प्रतिफल की प्रवृत्ति समाप्त होती है ताकि सीमांत लागत में घटने की आगे कोई संभावना ना हो। दूसरा, स्थिर प्रतिफल की अवस्था के पश्चात्, घटते प्रतिफल की अवस्था लागू होती है। अतः, उत्पादक के दृष्टिकोण से, स्थिर प्रतिफल की अवस्था बहुत महत्त्वपूर्ण है।

6.4.4 घटते प्रतिफल की व्याख्या

परिवर्ती अनुपात के नियम की तीनों अवस्थाओं में, घटते प्रतिफल की अवस्था सबसे महत्त्वपूर्ण है। अर्थशास्त्र में, घटते प्रतिफल के नियम की व्याख्या दो प्रकार से की जाती है। क्लासिकल अर्थशास्त्री मानते थे कि यह नियम, केवल कृषि पर लागू होता है। मूल रूप से क्लासिकल अर्थशास्त्रियों की इस स्थिति को मानते हुए नव क्लासिकल अर्थशास्त्री मार्शल ने कहा है, ''हम व्यापक तौर पर कहते हैं कि उत्पादन का वह भाग, जिसमें प्रकृति भूमिका निभाती है, घटते प्रतिफल की प्रवृत्ति दर्शाता है, तथा वह भाग जिसमें मानव भूमिका निभाता है, बढ़ते प्रतिफल की प्रवृत्ति दर्शाता है।''

आधुनिक अर्थशास्त्री, जैसे, जॉन रॉबिंसन, स्टिग्लर, आदि अर्थशास्त्रियों की दूसरी श्रेणी का निर्माण करते हैं। ये अर्थशास्त्री क्लासिक अर्थशास्त्रियों की तुलना में घटते प्रतिफल के नियम को अधिक व्यापक पटल पर स्वीकृति देते हैं। इनके अनुसार, यह नियम उत्पादन क्रिया के सभी क्षेत्रों में लागू होता है।

मार्शल ने तर्क दिया था कि यह नियम केवल कृषि में लागू होता है, इसलिए मार्शल ने इसकी केवल कृषि के संदर्भ में चर्चा की है। मार्शल के अनुसार :

"एक भूखंड पर खेती के लिए लगाए गए श्रम तथा पूँजी में वृद्धि करने पर, उत्पाद की मात्रा में होने वाली वृद्धि, सामान्यतः कम अनुपात में होती है, जब तक यह कृषि की कला में सुधार के साथ संगत न हो।"

जब भूमि को स्थिर रखते हुए रखते हुए, उस भूमि में लगाए गए श्रम तथा पूँजी की मात्रा को बढ़ाया जाता है, कुल उत्पाद बढ़ता है लेकिन उत्पादन के साधनों मे वृद्धि के समान अनुपात में नहीं। यह कम अनुपात में बढ़ता है। उदाहरण के लिए, यदि एक कृषक, श्रम की मात्रा तथा भूमि के एक निश्चित भूखंड पर लगाई गई पूँजी की मात्रा दोगुना कर देता है तब निःसंदेह कुल उत्पादन बढ़ता है लेकिन यह स्वयं का दोगुना नहीं होता। इस कारण से कृषक, भूमि के निश्चित भूखंड पर, उत्पादन के अन्य साधनों के प्रयोग को लगातार बढ़ाना, लाभदायक नहीं समझते। वह अपने अनुभवों से जानते हैं, जब तक कृषि की तकनीक में सुधार नहीं होता, भूखंड पर श्रम तथा पूँजी की मात्रा में वृद्धि, सीमांत उत्पाद में निरंतर कमी की अवस्था की ओर अग्रसर होती है।

मार्शल ने कृषि क्षेत्र में घटते प्रतिफल के नियम की दो सीमाओं को स्वीकार किया है।

1) **यह नियम सामान्यतः कृषि में लागू होता है :** मार्शल यह जानते थे की घटते प्रतिफल के नियम कृषि में सदैव लागू नहीं होते (अतः यह कृषि में सामान्यतः लागू होता है)। कुछ स्थितियों में, जब कृषक श्रम तथा पूँजी की प्रथम इकाई भूमि के स्थिर भूखंड पर लगाते हैं, भूमि की उत्पादकता का पूरी तरह दोहन नहीं हो पाता है। तदानुसार, उत्पादन का स्तर नीचे रहता है। श्रम तथा पूँजी की दूसरी इकाई का प्रयोग किया जाता है, उत्पादन अधिक अनुपात में बढ़ता है। हालांकि, यह प्रवृत्ति अधिक समय तक जारी नहीं रहती। जल्द ही कृषक पाते हैं कि श्रम तथा पूँजी की अतिरिक्त इकाई से कम दर पर सीमांत उत्पाद प्राप्त हो रहा है। ऊपर दिए हुए कारणों के अनुसार, मार्शल इस बात को उठाते समय सजग थे कि कृषि में सामान्यतः घटते प्रतिफल के नियम लागू होते हैं। हालांकि, कुछ अपवाद स्थितियों में, यह लागू नहीं होता।

2) **कृषि तकनीक में कोई सुधार नहीं होता :** घटते प्रतिफल का नियम केवल तब लागू होता है जब कृषि तकनीक में कोई सुधार नहीं होता। यह स्थैतिक कृषि का नियम कहलाता है। यदि किसान (कृषक) अपने भूखंड पर कृषि सुविधाओं का विस्तार कर सकता है, या बेहतर किस्म के बीज प्रयोग कर सकता है, बेहतर कृषि उपकरण (औजार), अधिक उर्वरक, आदि या उत्पादन की नई वैज्ञानिक विधि प्रयोग कर सकता है, तब वह इस नियम को लागू होने से रोक सकता है। सामान्यतः, कृषि तकनीक में सुधार श्रम तथा पूँजी में वृद्धि की तुलना में उत्पादन में तुलनात्मक रूप से अधिक वृद्धि करता है।

मार्शल के विचार के विपरीत, आधुनिक अर्थशास्त्री जैसे जॉन रॉबिंसन, स्टिग्लर और बाउल्डिंग घटते प्रतिफल के नियम को अधिक व्यापक तथा सार्वभौमिक मानते हैं। इन अर्थशास्त्रियों के अनुसार, यह नियम उत्पादन क्रियाओं की सभी शाखाओं पर लागू होता है। इसीलिए, इन्होंने इस नियम को एक सामान्य विधान के रूप में प्रस्तुत किया है। यह जॉन रॉबिंसन द्वारा दी गई इस नियम की परिभाषा से स्पष्ट हो जाता है :

> **"घटते प्रतिफल के नियम, जैसे यह सामान्यतः सूत्रबद्ध किए जाते हैं, बताते हैं कि, उत्पादन के एक साधन की स्थिर मात्रा के साथ, अन्य साधनों की मात्रा में लगातार वृद्धि, एक बिंदु के पश्चात उत्पादन में घटती मात्रा में वृद्धि करती है।"**

जॉन रॉबिंसन द्वारा दी गई इस नियम की उपरोक्त परिभाषा से यह स्पष्ट है कि वे इस नियम को सार्वभौमिक मानती हैं तथा इसके लागू होने को केवल कृषि तक सीमित नहीं करती। उनके अनुसार, यह नियम उत्पादन की सभी शाखाओं पर लागू होता है तथा इस नियम के लागू होने के पीछे मुख्य कारण यह है कि उत्पादन के विभिन्न साधनों के बीच अनुकूलतम (सर्वोत्तम) अनुपात देर-सवेर भंग हो ही जाती है।

घटते प्रतिफल का नियम एक तार्किक अनिवार्यता है। जब किसी उत्पादन क्रिया में, दिए गए उत्पादन के स्थिर साधनों के साथ प्रयोग किए जाने वाले परिवर्ती साधनों की मात्रा में वृद्धि की जाती है, अनुकूलतम अनुपात के बिंदु पर पहुंचने के पश्चात् घटते प्रतिफल के नियम लागू होते हैं। आरंभ में, दिए गए स्थिर साधनों के आकार की तुलना में परिवर्ती साधन का प्रयोग अनुकूलतम से कम होता है। किंतु, परिवर्ती साधनों के प्रयोग में विस्तार एक अन्य प्रकार की अनुकूलतम से हीन स्थिति की ओर अग्रसर होता है : परिवर्ती साधन की प्रत्येक इकाई को कार्य करने के लिए स्थिर साधनों की मात्रा अनुकूलतम से कम रह जाती है।

घटते प्रतिफल के नियम के लागू होने का एक अन्य महत्त्वपूर्ण कारण है कि उत्पादन का एक साधन (उत्पादन के विभिन्न साधनों में से), तो एक स्थिर मात्रा में ही प्रयोग होता है। यदि उत्पादन के सभी साधन प्रचुर मात्रा में उपलब्ध होते तथा इनके प्रयोग में

वृद्धि सभी बोधगम्य सीमाओं तक संभव होती, तो घटते प्रतिफल का नियम संभवतः लागू न होता। हालांकि, उत्पादन के सभी साधन भूमि, श्रम, पूँजी, उद्यम, संगठन, आदि दुर्लभ है और अधिकतर इनमें से किसी एक की पूर्ति को स्थिर माना जाता है। यही परिणाम घटते प्रतिफल का कारण है।

बोध प्रश्न 2

1) निम्नलिखित वाक्यों में से कौन-सा कथन सत्य है और कौन-सा असत्य, बताइए।

   i) उत्पादन की दूसरी अवस्था में, सीमांत उत्पाद तथा औसत उत्पाद दोनों घटते हैं।

   ii) उत्पादन की तीसरी अवस्था में, सीमांत उत्पाद ऋणात्मक होता है।

   iii) घटते प्रतिफल के नियम केवल कृषि में लागू होते हैं।

2) घटते प्रतिफल के नियम का वर्णन कीजिए। घटते प्रतिफल के नियम लागू होने की एक शर्त है कि 'अन्य बातें समान रहने पर' यह अन्य बातें क्या हैं?

   ....

   ....

   ....

3) उत्पादन की तीन अवस्थाओं का वर्णन कीजिए। एक विवेकशील उत्पादक प्रतियोगिता की स्थिति में है वह केवल दूसरी अवस्था में ही उत्पादन क्यों करता है?

   ....

   ....

   ....

4) वर्णन कीजिए : i) बढ़ते प्रतिफल के नियम, ii) स्थिर प्रतिफल के नियम।

   ....

   ....

   ....

6.5 सार-संक्षेप

इस इकाई में हमने अल्पकाल में उत्पादन पर ध्यान केंद्रित किया है। हमारी मान्यता रही है कि उत्पादन की केवल एक आगत परिवर्ती है तथा अन्य सभी आगतें स्थिर हैं। इसके पश्चात् हमने कुल उत्पाद, एक आगत के औसत उत्पाद तथा एक आगत के सीमांत उत्पाद को परिभाषित किया। हमने जाना कि जब उत्पादन की अन्य सभी आगतों को स्थिर रखते हुए एक परिवर्ती आगत की मात्रा को बढ़ाया जाता है तो कुल उत्पाद आरंभ में बढ़ती दर से बढ़ता है तथा इसके पश्चात घटती दर से बढ़ने लगता है। अधिकतम स्तर पर पहुंचकर, अंततः यह घटने लगता है। इसके पश्चात हमने परिवर्ती अनुपात के नियम का वर्णन किया। परंपरागत तौर पर परिवर्ती अनुपात के नियम को दर्शाने वाले उत्पादन वक्र को तीन अवस्थाओं में बांटा जाता है। पहली अवस्था में, औसत उत्पाद लगातार बढ़ता है; दूसरी अवस्था में, जहां सीमांत औसत उत्पाद के बराबर होता है, उस बिंदु से लगातार घटता है, किंतु धनात्मक रहता है; तथा तीसरी अवस्था में, कुल उत्पाद

घटता है और सीमांत उत्पाद ऋणात्मक होता है परिवर्ती अनुपात के नियम की तीनों अवस्थाओं में से घटते प्रतिफल की अवस्था सबसे महत्त्वपूर्ण होती है।

6.6 संदर्भ ग्रंथादि

1) Robert S.P rindyck, Daniel L. Rubinfeld and Prem L. Mehta, *Microeconomics* (Pearson Education, Seventh edition, 2009), Chapter 5, Section 5.1.

2) Dominick Salvatore, *Principles of Microeconomics* (Oxford University Press, Fifth edition, 2010), Chapter 7, Section 7.2.

3) A.Kontsoyianmis, *Modern Microeconomics* (The Macmillan Press Ltd., Second Edition, 1982/, Chapter 3.

4) John P Gould and Edward P Lazar, *Microeconomic Theory* (All India Traveller Bookseller, Sixth edition, 1996), Chapter 6.

6.7 बोध प्रश्नों के उत्तर अथवा संकेत

बोध प्रश्न 1

1) i) असत्य ii) सत्य

2) भाग 6.3 देखें।

बोध प्रश्न 2

1) i) असत्य ii) सत्य iii) असत्य

2) उपभाग 6.4.4 देखें।

3) उपभाग 6.4.1 देखें।

4) उपभाग 6.4.2 देखें बढ़ते प्रतिफल की व्याख्या, उपभाग 6.4.3 देखें स्थिर प्रतिफल की व्याख्या

इकाई 7 दो एवं दो से अधिक आगतों का उत्पादन फलन

संरचना

7.0 उद्देश्य

7.1 विषय प्रवेश

7.2 उत्पादन फलन : संकल्पना

7.3 दो परिवर्ती संसाधनों वाले उत्पादन फलन

7.3.1 सम-उत्पाद वक्र क्या है?

7.3.2 सम-उत्पाद वक्रों के प्रकार

7.3.3 सम-उत्पाद वक्रों की मान्यताएँ

7.3.4 सम-उत्पाद वक्रों की विशेषताएँ

7.4 उत्पादन का आर्थिक क्षेत्र तथा कटक (रिज) रेखाएँ

7.5 संसाधनों का सर्वोत्तम (इष्टतम) संयोजन तथा उत्पादक का संतुलन

7.5.1 आगम कीमतें तथा सम-लागत रेखाएँ

7.5.2 एक दी गई लागत पर अधिकतम उत्पाद

7.5.3 दिए गए उत्पादन के स्तर पर न्यूनतम लागत

7.6 विस्तार पथ

7.6.1 दीर्घकाल में सर्वोत्तम (इष्टतम) विस्तार पथ

7.6.2 अल्पकाल में सर्वोत्तम (इष्टतम) विस्तार पथ

7.7 अनेक परिवर्ती संसाधनों वाले उत्पाद फलन

7.7.1 पैमाने के बढ़ते प्रतिफल

7.7.2 पैमाने के स्थिर प्रतिफल

7.7.3 पैमाने के ह्रासमान प्रतिफल

7.8 पैमाने की बाह्य मितव्ययताएं तथा अपमितव्ययताएं

7.8.1 पैमाने की आंतरिक मितव्ययताएं

7.8.2 पैमाने की आंतरिक अपमितव्ययताएं

7.8.3 पैमाने की बाह्य मितव्ययताएं

7.8.4 पैमाने की बाह्य अपमितव्ययताएं

7.9 सार-संक्षेप

7.10 संदर्भ ग्रंथादि

7.11 बोध प्रश्नों के उत्तर अथवा संकेत

7.12 पाठांत प्रश्न

7.0 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के उपरांत आप :

- 'सम-उत्पाद वक्र' का अर्थ और स्वरूप जान पाएंगे;
- वह अर्थक्षम क्षेत्र जान पाएंगे जिसमें उत्पादन अनिवार्यतः होगा;
- एक नियत लागत पर अधिकतम संभव उत्पादन का आकलन कर पाएंगे;
- यदि उत्पादन ज्ञात हो तो यह आकलन कर पाएंगे कि सम-उत्पाद वक्र के किस बिंदु पर उस उत्पादन की लागत न्यूनतम होगी;
- दीर्घ एवं अल्पकाल में विस्तार पथों का स्वरूप का वर्णन कर पाएंगे;
- पैमाने के प्रतिफल की संकल्पना बता पाएंगे; और
- पैमाने की मितव्ययताओं तथा अपमितव्ययताओं की संकल्पनाओं की व्याख्या कर पाएंगे।

7.1 विषय प्रवेश

व्यष्टि अर्थशास्त्र के सिद्धांतों में यह एक महत्त्वपूर्ण मुद्दा रहता है कि उत्पादन की लागतों को न्यूनतम रखते हुए कोई फर्म पूँजी, श्रम, कच्चा माल आदि आगतों के संयोजन किस प्रकार बनाती है। फर्म पूँजी, श्रम और कच्चे माल के अनेक प्रकार से संयोजन बनाते हुए आगतों को उत्पादन में परिवर्तित कर सकती है। मुख्यतः इस कार्य के लिए ये तीन विधियाँ होती हैं :

1) केवल एक आगत या संसाधन के प्रयोग में परिवर्तन

2) दो संसाधनों के प्रयोग में परिवर्तन

3) दो या उससे अधिक संसाधनों के प्रयोग में परिवर्तन

पिछली इकाई में हमने ऐसे उत्पादन फलन के स्वरूप पर चर्चा की थी जहां फर्म केवल एक आगत की मात्रा में ही परिवर्तन करती है। वर्तमान इकाई में हम ऐसे उत्पादन फलन के स्वरूप, रचना और विशेषताओं के विषय में चर्चा करेंगे जिनमें फर्म दो (या और अधिक) आगतों के प्रयोग में परिवर्तन कर सकती है।

आइए, उत्पादन फलन की अवधारणा को एक बार फिर से स्पष्टतः याद करते हुए अपनी चर्चा को आगे बढ़ाएं।

7.2 उत्पादन फलन : संकल्पना

उत्पादन का सिद्धांत तकनीकी तथा अभियांत्रिकी सूचनाओं के कुछ पूर्व ज्ञान से प्रारंभ होता है। उदाहरण के लिए, यदि एक फर्म के पास श्रम, भूमि तथा मशीनरी की एक दी गई मात्रा है तो उत्पादन के स्तर का निर्धारण तकनीकी तथा अभियांत्रिकी परिस्थितियों द्वारा होगा तथा अर्थशास्त्रियों द्वारा इसका पूर्वाकलन नहीं हो सकता। उत्पादन का स्तर तकनीकी परिस्थितियों पर निर्भर करता है। यदि उत्पादन की तकनीक में कोई सुधार (उन्नति) होता है तो साधनों की समान (स्थिर) मात्रा से भी बढ़ा हुआ उत्पादन प्राप्त किया जा सकता है। तथापि, एक दिए गए समय बिंदु पर उत्पादन के साधनों के दिए गए संयोजन से, उत्पादन के अधिकतम स्तर का केवल एक बिंदु प्राप्त किया जा सकता है। यह तकनीकी नियम, जो उत्पादन के साधन आगतों तथा उत्पाद के बीच संबंध को व्यक्त करता है, उसे उत्पादन फलन कहा जाता है।

इस प्रकार उत्पादन फलन, उत्पादन के नियमों की व्याख्या करता है, अर्थात् किसी निश्चित समयावधि में साधन आगतों का उत्पादों (उत्पादन) में रूपांतरण करना। आगे, उत्पादन फलन केवल उत्पादन की तकनीकी रूप से कुशल (दक्षतापूर्ण) विधियों को शामिल किया जाता है (क्योंकि कोई भी विवेकशील (तर्कसंगत) उद्यमी अकुशल विधियों का प्रयोग नहीं करेगा)।

सरलता के लिए हम मान लेते हैं कि यहां केवल दो आगतें हैं– श्रम (L) तथा पूँजी (K)। हम उत्पादन फलन को इस प्रकार लिख सकते हैं –

$Q= F (L,K)$

यह समीकरण उत्पाद की मात्रा Q को दो आगतों श्रम तथा पूँजी की मात्राओं से संबंधित करता है।

अर्थशास्त्र में कॉब डग्लस उत्पादन फलन एक प्रसिद्ध (लोकप्रिय) उत्पादन फलन है जो निम्न प्रकार है:

$Q=AL^{\alpha}K^{\beta}$

रेखीय समरूप उत्पादन फलन एक विशेष श्रेणी का उत्पादन फलन है। यदि *सभी आगतों में समान अनुपात में वृद्धि की जाती है, उत्पाद भी उसी अनुपात में बढ़ जाता है।* इस स्थिति में, काब-डग्लस उत्पादन फलन होगा :

$Q=AL^{\alpha}K^{1-\alpha}$

जहाँ $\beta= 1-\alpha$

यहां हम देख सकते हैं कि जब श्रम तथा पूँजी की मात्रा में λ गुणा वृद्धि होती है, उत्पाद Q भी λ गुणा बढ़ता है जैसे

$A(\lambda L)^{\alpha} (\lambda K)^{1-\alpha}=A[\lambda^{\alpha+(1-\alpha)} L^{\alpha}K^{1-\alpha}]=\lambda[AL^{\alpha}K^{1-\alpha}]=\lambda Q$

7.3 दो परिवर्ती संसाधनों वाले उत्पादन फलन

दो परिवर्ती आगतों या उत्पादन के साधनों का प्रयोग करने वाली उत्पादक फर्म के व्यवहार की हम सम-उत्पाद वक्रों की संकल्पना के माध्यम से व्याख्या कर सकते हैं।

7.3.1 सम-उत्पाद वक्र क्या है?

सम-उत्पाद वक्र उत्पादन के दो साधनों के उन सभी संयोजनों का चित्रीय निरूपण है जिनसे एक समान उत्पादन प्राप्त होता है।

एक उदाहरण की सहायता से सम-उत्पाद की अवधारणा को समझना सरल होगा। आइये, हम मान लेते हैं कि एक फर्म X वस्तु की 100 इकाइयों का उत्पाद करना चाहती है तथा इसके लिए वह तालिका 7.1 में दर्शायी गयी छह प्रक्रियाओं में से किसी एक का प्रयोग कर सकती है।

तालिका 7.1 : X वस्तु की 100 इकाइयों का उत्पादन करने के श्रम तथा पूँजी के संयोजनों को दर्शाती सम-उत्पाद तालिका।

प्रक्रिया	श्रम की इकाइयाँ	पूँजी की इकाइयाँ
1	1	10
2	2	7
3	3	5
4	4	4
5	6	3
6	9	2

तालिका 7.1 से, यह स्पष्ट है कि सभी छह प्रक्रियाओं से उत्पाद का समान स्तर प्राप्त होता है जो X वस्तु की 100 इकाइयाँ हैं। पहली प्रक्रिया स्पष्ट रूप से पूँजी-प्रधान है। क्योंकि हम मानते है कि साधनों का प्रतिस्थापन संभव है, हम पाते हैं कि यहाँ फर्म के समक्ष पाँच और प्रक्रियाएँ उपलब्ध हैं तथा इनमें से प्रत्येक में साधनों की सघनता बदल रही है। छठी प्रक्रिया सर्वाधिक श्रम-प्रधान या न्यूनतम पूँजी-प्रधान प्रक्रिया है। चित्र द्वारा, हम उत्पादन के दो साधनों (श्रम तथा पूँजी) का सम-उत्पाद वक्र सरलता से बना सकते हैं। इस प्रकार का एक सम-उत्पाद वक्र चित्र 7.1 में दर्शाया गया है। यह तालिका 7.1 में दी गई सूचना के आधार पर बनाया गया है।

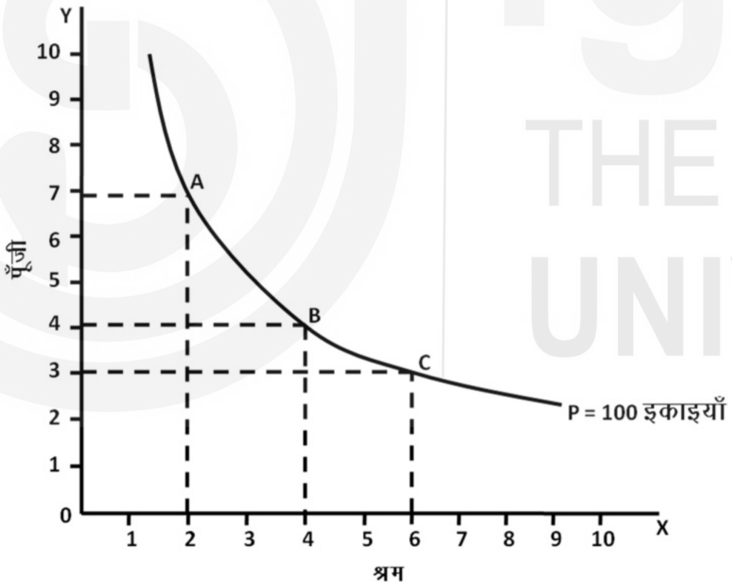

चित्र 7.1 : यह चित्र श्रम तथा पूँजी के विभिन्न संयोजनों का प्रयोग करके प्राप्त उत्पाद के समान स्तर को 100 इकाइयों को बिंदु A, B तथा C पर दर्शाता है। वक्र P सम-उत्पाद को दर्शाता है

7.3.2 सम-उत्पाद वक्रों के प्रकार

1) उन्नतोदर सम-उत्पाद वक्र

2) रेखीय सम-उत्पाद वक्र

3) समकोणीय या L-आकार के सम-उत्पाद वक्र

परंपरागत आर्थिक सिद्धांत अधिकतर उन्नतोदर सम-उत्पाद, जैसा चित्र 7.1 में दर्शाया गया है, का प्रयोग करती है। तो भी, सम-उत्पाद कोई अन्य आकार का भी हो सकता है, यह साधनों के प्रतिस्थापन की श्रेणियों पर निर्भर करता है। दो अन्य संभव उत्पादन सम-उत्पाद वक्र, रेखीय सम-उत्पाद तथा L-आकार सम-उत्पाद वक्र हैं, यह कोणीय होते हैं।

रेखीय सम-उत्पाद वक्र : उत्पाद के साधनों के बीच पूर्ण प्रतिस्थापकता की स्थिति में, सम-उत्पाद वक्र एक सीधी रेखा का आकार ले लेता है जो बायीं ओर से दायीं ओर ढालू होती है जैसा कि चित्र 7.2 में दर्शाया गया है। चित्र 7.2 में दर्शाया गया है कि जब श्रम की मात्रा में RS की वृद्धि की जाती है, पूँजी की मात्रा में JK की कमी की जा सकती है ताकि उत्पाद के समान स्तर, अर्थात् X वस्तु की 50 इकाइयों का उत्पादन किया जा सके। इसी प्रकार, श्रम की मात्रा में ST की वृद्धि करने पर, पूँजी की मात्रा में KL की कमी करना संभव है तथा श्रम की मात्रा में TU की वृद्धि करने पर, पूँजी की मात्रा में LM की कमी की जा सकती है जिससे X वस्तु की 50 इकाइयों का उत्पादन किया जा सकता है क्योंकि श्रम के संदर्भ में $RS = ST = TU$ है तथा पूँजी के संदर्भ में $JK = KL = LM$ है, यह स्पष्ट है कि श्रम की एक स्थिर मात्रा, पूँजी की एक स्थिर मात्रा का प्रतिस्थापन करती है। इसके निहितार्थ यह है कि एक वस्तु की दी गई मात्रा का केवल श्रम के प्रयोग से या केवल पूँजी के प्रयोग से या श्रम तथा पूँजी के अनंत संयोजनों से उत्पादन किया जा सकता है। उत्पादन की वास्तविक दुनिया में ऐसा शायद ही कहीं होता है। तो भी, एक रेखीय नीचे की ओर ढालू सम-उत्पाद वक्र को एक अपवाद की तरह लिया जा सकता है।

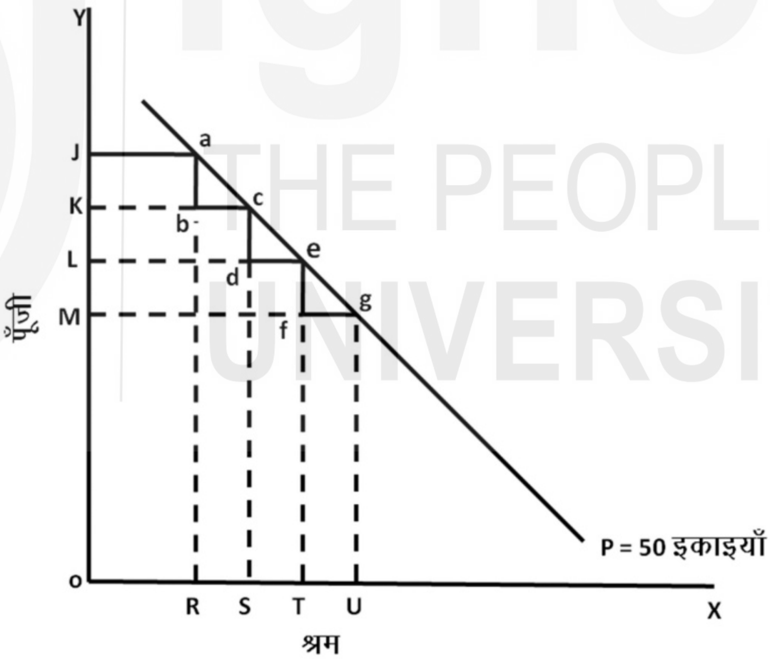

चित्र 7.2 : उत्पादन के साधनों के पूर्ण प्रतिस्थापन की स्थिति में, सम-उत्पाद वक्र एक सीधी रेखा होता है तथा यह इसलिए, रेखीय सम-उत्पाद के रूप में जाना जाता है

समकोणीय अथवा L-आकार सम-उत्पाद वक्र : जब उत्पादन के साधन प्रतिस्थापक नहीं होते अपितु पूरक होते है तथा तकनीकी गुणंक स्थिर होते हैं तो हमें कोणीय सम-उत्पाद वक्र प्राप्त होते हैं। इस कथन का अर्थ है कि उत्पादन का इष्टतम (कुशलतम) स्तर केवल तब प्राप्त किया जा सकता है जब, उत्पादन के साधनों का प्रयोग एक स्थिर अनुपात में किया जाता है। इस स्थिति में, यदि उत्पादक, उत्पादन के एक साधन का स्थिर अनुपात के लिए आवश्यक मात्रा से अधिक मात्रा में प्रयोग करता है, तो उत्पादन में कोई वृद्धि नहीं होगी। उत्पादन के साधनों के पूरक होने की स्थिति में, सम-उत्पाद

का आकार समकोण या अंग्रेज़ी के अक्षर 'L' आकार का होता है जैसा चित्र 7.3 में दर्शाया गया है। जैसा कि चित्र से स्पष्ट हो रहा है, सम-उत्पाद वक्र का निर्माण दो सीधी रेखाओं द्वारा हो रहा है, एक खड़ी (लंब) रेखा तथा दूसरी क्षैतिक (आड़ी) रेखा तथा यह दोनों रेखाएँ एक-दूसरे पर लंब होती हैं। इन दोनों रेखाओं का उभयनिष्ठ (समान) बिंदु, मूल बिंदु की ओर उन्नतोदर (उत्तल) होता है।

इस प्रकार के, सम-उत्पाद वक्र को लिओनटिफ (Leontief) सम-उत्पाद वक्र कहते हैं। यह नाम Wassily Leontief द्वारा आगत-निर्गत विश्लेषण के क्षेत्र में किए गए उल्लेखनीय कार्य के लिए दिया गया है। समकोणीय सम-उत्पाद वक्र के निहितार्थ यह नहीं है कि उत्पादन के दो साधनों, यानी कि श्रम तथा पूँजी, की मात्रा में वृद्धि करने पर उत्पाद भी उसी अनुपात में बढ़ जाएगा। इसका निहितार्थ केवल यह है कि वस्तु की किसी मात्रा का उत्पादन करने के लिए, पूँजी तथा श्रम का एक स्थिर अनुपात में प्रयोग करना आवश्यक है। जैसे चित्र 7.3 में दर्शाया गया है। इसमें सम-उत्पाद का ढाल दर्शाता है कि उत्पादन में इष्टतम स्थिति प्राप्त करने के लिए, पूँजी श्रम का अनुपात बनाए रखना आवश्यक है।

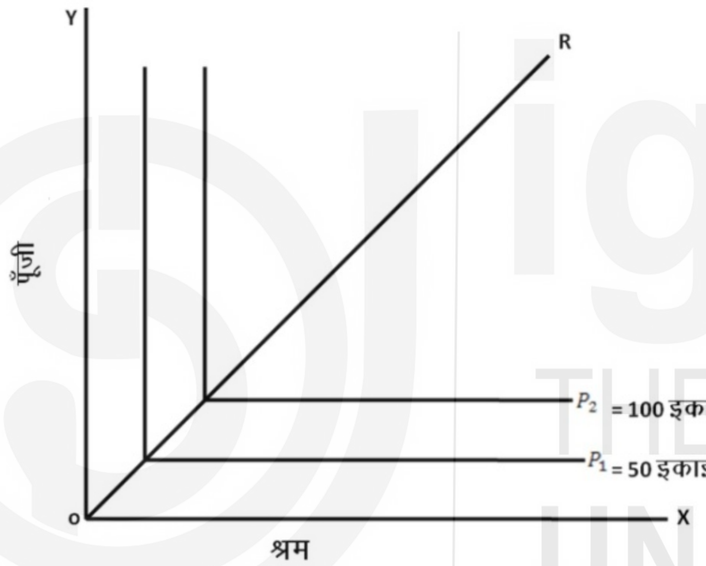

चित्र 7.3: यदि उत्पादन के साधनों का प्रयोग केवल एक निश्चित अनुपात में किया जाता है तो सम-उत्पाद वक्र 'L' आकार का होगा तथा यह समकोणीय सम-उत्पाद वक्र के रूप में जाना जाता है

7.3.3 सम-उत्पाद वक्रों की मान्यताएँ

उत्पादन फलन दर्शाता है कि कैसे साधन आगतों के बदलने पर उत्पादन परिवर्तित होता है। इसलिए, एक उत्पादक के लिए हमेशा अनेक सम-उत्पाद वक्र होते हैं जो उत्पादन के विभिन्न स्तरों को दर्शाते हैं (एक सम-उत्पाद वक्र एक निश्चित उत्पादन के स्तर को दर्शाता है)। मूल बिंदु के नज़दीक का सम-उत्पाद वक्र उत्पादन के अपेक्षाकृत निम्न स्तर को दर्शाता है। जैसे-जैसे उत्पादक मूल बिंदु से दूर तथा उच्च सम-उत्पाद वक्र की ओर जाता है उत्पादन का स्तर बढ़ता जाता है। एक उत्पादक के सभी सम-उत्पाद वक्रों के समूह को सम-उत्पाद मानचित्र कहते हैं। ऐसा ही एक सम-उत्पाद मानचित्र, जिसमें चार सम-उत्पाद वक्र है, चित्र 7.4 में दर्शाया गया है।

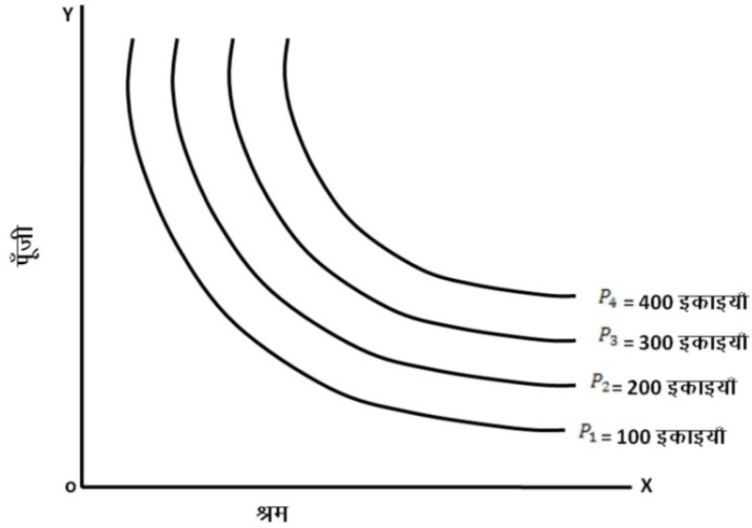

चित्र 7.4 : जब अनेक सम-उत्पाद वक्रों को एक साथ दर्शाया जाता है, हमें एक सम-उत्पाद मानचित्र प्राप्त होता है

चित्र 7.4 में P_4 उच्चतम सम-उत्पाद वक्र है तथा यह उत्पादन के उच्चतम स्तर को दर्शाता है, अर्थात् 400 इकाइयाँ। P_3, P_2 तथा P_1 इसी क्रम में उत्पादन के निम्न स्तरों को दर्शाते हैं। तो भी, यहां यह बात ध्यान में रहे कि सम-उत्पाद मानचित्र पर दो सम-उत्पाद वक्रों के मध्य का अंतर (दूरी) उत्पादन के विभिन्न स्तरों के बीच निरपेक्ष अंतर नहीं मापता है।

7.3.4 सम-उत्पाद वक्रों के गुण या विशेषताएँ

एक निरंतर या सतत् सम-उत्पाद वक्र जो परंपरागत आर्थिक सिद्धांत में प्रयोग किया जाता है, उसमें निम्नलिखित विशेषताएं होती हैं :

1) सम-उत्पाद वक्र ऋणात्मक ढाल वाले होते हैं।

2) उच्च सम-उत्पाद वक्र, उत्पादन के उच्च स्तर को दर्शाता है।

3) दो सम-उत्पाद वक्र एक-दूसरे को छूते या काटते नहीं हैं।

4) सम-उत्पाद वक्र मूल बिंदु की ओर उन्नतोदर होते हैं।

1) **सम-उत्पाद वक्र ऋणात्मक ढाल वाले होते हैं**

आमतौर पर, सम-उत्पाद वक्र बायीं से दायीं ओर नीचे की ओर ढालू होते हैं, अर्थात् यह ऋणात्मक रूप से ढालू होते हैं। सम-उत्पाद वक्र की इस विशेषता का कारण यह है कि जब एक साधन की मात्रा में कमी की जाती है, उत्पादन का समान स्तर केवल तब प्राप्त किया जा सकता है जब दूसरे साधन की मात्रा में वृद्धि की जाए। सम-उत्पाद की यह विशेषता, हालांकि यह मानती है कि किसी भी स्थिति में साधन की सीमांत उत्पादकता ऋणात्मक नहीं होगी। एक अधिक वास्तविक स्थिति में, जब इस मान्यता का त्याग किया जाता है हम एक ऐसा सम-उत्पाद वक्र पाते हैं जो अपने आप पीछे की ओर मुड़ता है या जिसका एक धनात्मक ढाल वाला खंड होता है। चित्र 7.5 में, एक ऐसा ही सम-उत्पाद वक्र दर्शाया गया है। इस सम-उत्पाद वक्र के AB तथा CD खंड धनात्मक ढाल वाले हैं।

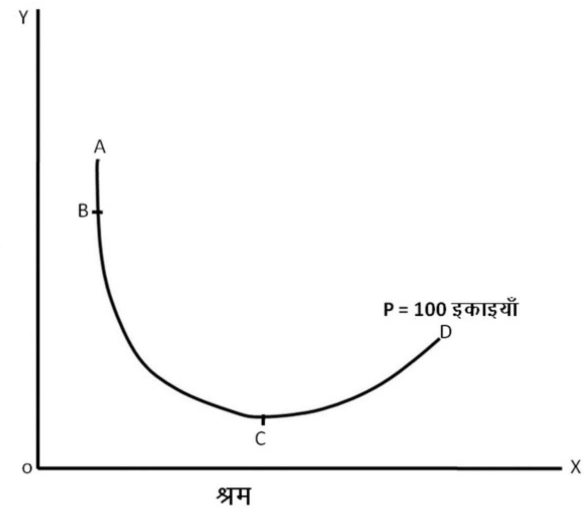

चित्र 7.5 : सम-उत्पाद वक्र जिसमें धनात्मक ढाल वाले खंड हैं

2) **एक उच्च सम-उत्पाद वक्र, उच्च उत्पादन स्तर को दर्शाता है**

एक उच्च सम-उत्पाद वक्र वह है जो मूल बिंदु से सबसे अधिक दूर है। यह उत्पादन के उच्च स्तर को दर्शाता है जो कि एक साधन की समान मात्रा तथा दूसरे साधन की अधिक मात्रा या दोनों साधनों की अधिक मात्रा के प्रयोग से प्राप्त किया जा सकता है। चित्र 7.6 में दो सम-उत्पाद वक्र P_1 तथा P_2 दर्शाए गए हैं। यह उत्पादन के 100 इकाइयों तथा 200 इकाइयों के स्तरों को दिखाते हैं। निस्संदेह, सम-उत्पाद वक्र P_2 द्वारा दर्शाया गया उत्पादन स्तर केवल तब प्राप्त किया जा सकता है जब सम-उत्पाद वक्र P_1 द्वारा दर्शाए गए उत्पादन स्तर के लिए आवश्यक साधन आगतों की तुलना में अधिक साधन आगतों का प्रयोग किया जाता है।

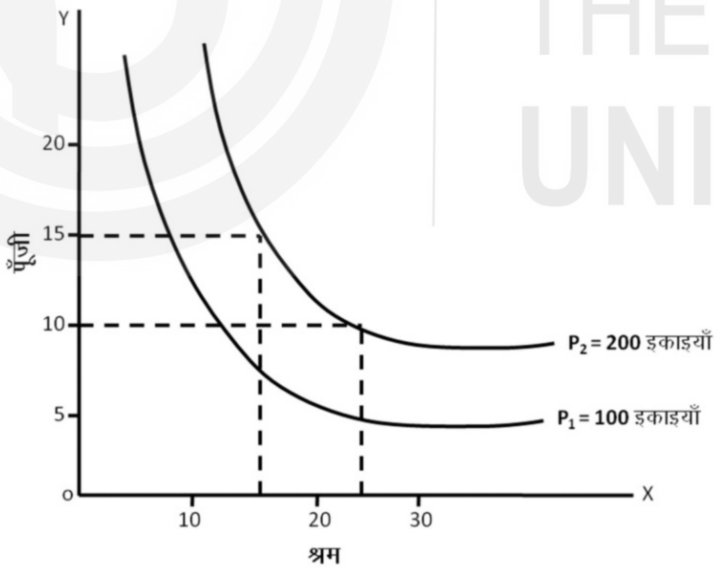

चित्र 7.6 : भिन्न उत्पादन स्तरों को प्रस्तुत करते हुए दो सम-उत्पाद वक्र। एक उच्च सम-उत्पाद वक्र, उत्पादन की उच्च मात्रा को दर्शाता है

3) **कोई दो सम-उत्पाद वक्र एक-दूसरे को छूते या काटते नहीं हैं :**

सम-उत्पाद वक्र एक-दूसरे को छूते या काटते नहीं हैं क्योंकि यह उत्पादन के भिन्न-भिन्न स्तरों को दर्शाते हैं। उदाहरण के लिए, यदि सम-उत्पाद वक्र P_1 तथा P_2 (चित्र 7.7) उत्पादन के स्तरों क्रमशः 100 इकाइयों तथा 200 इकाइयों को दर्शाते हैं, इनका किसी बिंदु पर प्रतिच्छेदन, यहां बिंदु A का अर्थ है कि उत्पाद के दो स्तरों

(अर्थात् 100 तथा 200 इकाइयों) को पूँजी तथा श्रम की समान मात्रा के प्रयोग से प्राप्त किया जा सकता है जो कि संभव नहीं हो सकता है। इस कारण से, दो सम-उत्पाद वक्र एक-दूसरे को कभी नहीं छुएंगे।

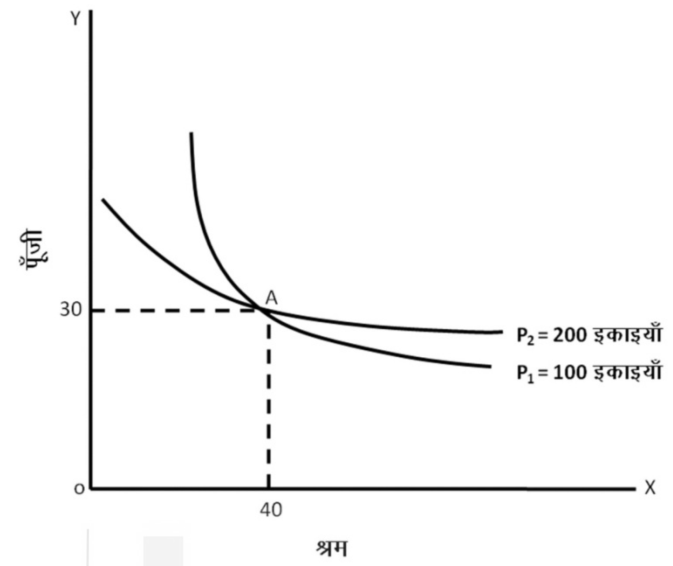

चित्र 7.7 : दो सम-उत्पाद वक्र एक-दूसरे को नहीं काटते हैं क्योंकि प्रत्येक सम-उत्पाद वक्र उत्पादन के अलग (भिन्न) स्तर को दर्शाता है

4) सम-उत्पाद वक्र मूल बिंदु की ओर उन्नतोदर होते हैं

अधिकतर उत्पादन प्रक्रियाओं में उत्पादन के साधनों में प्रतिस्थापन का गुण होता है। प्रायः, श्रम को पूँजी के साथ प्रतिस्थापित किया जा सकता है। तथापि, उत्पादन प्रक्रिया में, उत्पादन के एक साधन की अन्य से प्रतिस्थापन की दर, जो कि सीमांत तकनीकी प्रतिस्थापन की दर (MRTS) है, में प्रायः घटने की प्रवृत्ति पाई जाती है।

साधन L के लिए साधन K की सीमांत तकनीकी प्रतिस्थापन दर ($MRTS_{L,K}$), K की वह मात्रा है जो कि L की मात्रा में एक इकाई की वृद्धि करने पर घटानी पड़ती है ताकि उत्पादन का स्तर अपरिवर्तित रहे।

सम-उत्पाद वक्र, ठीक मूल बिंदु की ओर उन्नतोदर होते हैं क्योंकि सीमांत तकनीकी प्रतिस्थापन दर नीचे की ओर झुकती है। आइये हम चित्र 7.8 की सहायता से यह समझें कि ऐसा क्यों होता है। यहां वक्र P एक सम-उत्पाद वक्र है। हम मान लेते हैं कि उत्पादक, वक्र के 'a' बिंदु पर है। इसका अर्थ है कि वह पूँजी की OJ इकाइयों तथा क्रम की OR इकाइयों का प्रयोग करके उत्पाद की 100 इकाइयों का उत्पादन करता है। हम यह मानते हैं कि श्रम की एक इकाई OR = RS = ST = TU = UV है। अब, यदि वह श्रम की मात्रा में RS की वृद्धि करना चाहते हैं तथा उत्पाद को 100 इकाइयों पर रखना चाहता है, तो उसे पूँजी के उपयोग में JK के मात्रा की कमी करनी पड़ेगी। इसी प्रकार, जब वह श्रम की मात्रा में ST, TU तथा UV की वृद्धि करता है, तब उसे पूँजी के प्रयोग में क्रमशः KL, LM तथा MN की कमी करनी पड़ेगी, यदि उत्पादन को समान स्तर (अर्थात् 100 इकाइयों) पर बनाए रखना है। चित्र से यह स्पष्ट है कि JK > KL > LM > MV है। अन्य शब्दों में, जैसे-जैसे श्रम की अतिरिक्त इकाइयों को उत्पादन (रोज़गार) में लगाया जाता है, पूँजी के स्थान पर श्रम का प्रतिस्थापन करना प्रगतिशील रूप से अधिक से अधिक कठिन होता जाता है, पूँजी की कम से कम मात्रा का प्रतिस्थापन श्रम की अतिरिक्त इकाइयों से होता है। इसका अर्थ यह है कि तकनीकी प्रतिस्थापन की सीमांत दर में गिरने की प्रवृत्ति पाई जाती है। यह इस कारण होता है कि उत्पादन के साधन एक-दूसरे के पूर्ण प्रतिस्थापन नहीं होते हैं। जब एक साधन की

मात्रा घटाई जाती है, यह आवश्यक हो जाता है कि अन्य साधन की मात्रा को बढ़ती दर से बढ़ाया जाए। उदाहरण के लिए, हम कल्पना करते हैं कि एक विशेष उत्पादक क्रिया में उत्पादन के दो साधन-श्रम तथा पूँजी लगाए गए हैं। जब लगाए गए श्रम की मात्रा में एक इकाई की कमी की जाती है, आरंभ में यह संभव है कि पूँजी की एक अतिरिक्त इकाई लगाकर उत्पादन क्रिया को किया जा सके। तथापि, जब श्रम की एक और इकाई को घटाया जाता है, यह आवश्यक हो जाता है कि इसकी क्षतिपूर्ति, कह सकते हैं, पूँजी की दो इकाइयाँ लगाकर की जाए। जैसे-जैसे रोज़गार में लगाए गए श्रम की मात्रा प्रत्येक स्तर पर लगातार घटती है, हमें श्रम की प्रत्येक अतिरिक्त इकाई की हानि की क्षतिपूर्ति के लिए पूँजी की अधिक से अधिक इकाइयों की आवश्यकता होगी।

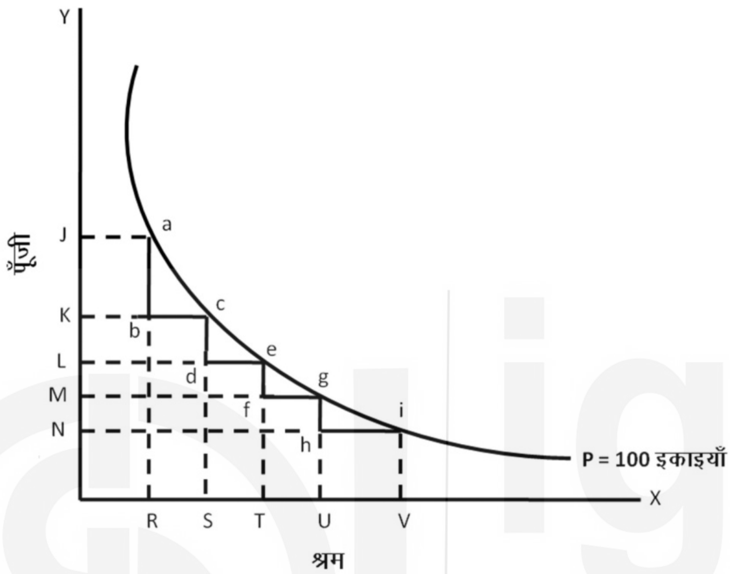

चित्र 7.8 : एक सम-उत्पाद वक्र मूल बिंदु की ओर उन्नतोदर होता है क्योंकि तकनीकी प्रतिस्थापन की सीमांत दर लगातार गिरती (घटती) है

यदि उत्पादन के साधन पूर्ण प्रतिस्थापक होते हैं, तो इनके बीच तकनीकी प्रतिस्थापन की सीमांत दर समान (स्थिर) होगी तथा सम-उत्पाद वक्र रेखीय होगा और बाईं से दाईं और नीचे की ओर ढालू होगा जैसा चित्र 7.7 में दर्शाया गया है। पूर्ण (विशुद्ध) संपूरकता की स्थिति में, यानी उत्पादन के साधनों की शून्य प्रतिस्थापनता की स्थिति में सम-उत्पाद वक्र समकोण आकार का होगा या हम कह सकते हैं कि यह अंग्रेज़ी 'L' आकार का होगा जैसा चित्र 7.3 में है। तथापि, रेखीय तथा समकोणीय सम-उत्पाद वक्र उत्पादन प्रक्रिया में विशेष अपवादी स्थितियाँ ही हैं।

बोध प्रश्न 1

1) निम्नलिखित कथनों को **सत्य** या **असत्य** के रूप में दर्शाए :

   i) उत्पादन के साधनों की पूर्ण प्रतिस्थापनता की स्थिति में, सम-उत्पाद वक्र मूल बिंदु की ओर उन्नतोदर होते हैं।

   ii) सम-उत्पाद वक्र धनात्मक ढाल वाले होते हैं।

   iii) उच्च सम-उत्पाद वक्र, उच्च उत्पादन स्तर को दर्शाता है।

   iv) कोई दो सम-उत्पाद वक्र एक-दूसरे को नहीं काटते हैं।

....

....

....

....

2) सम-उत्पाद वक्र की परिभाषा दीजिए। इसकी विशेषताओं की व्याख्या कीजिए।

....

....

....

3) उत्पादन के साधनों के प्रतिस्थापन की श्रेणियों के आधार पर सम-उत्पाद वक्र के संभावित आकारों की चर्चा कीजिए।

....

....

....

7.4 उत्पादन का आर्थिक क्षेत्र तथा कटक (रिज) रेखाएँ

सामान्यतः उत्पादन फलनों से सम-उत्पाद वक्र उत्पन्न होता है जो मूल बिंदु की ओर उन्नतोदर होता है, सर्वत्र ऋणात्मक रूप से ढालू होता है, एक-दूसरे को काटता नहीं है तथा उच्च सम-उत्पाद वक्र उत्पादन के उच्च स्तर को दर्शाता है। तो भी, कुछ ऐसे उत्पादन फलन भी होते हैं। जो ऐसे सम-उत्पाद वक्रों का निर्माण करते है जिनमें एक सामान्य सम-उत्पाद वक्र की सभी विशेषताएँ होती हैं सिवाय इसके कि यह सर्वत्र ऋणात्मक ढाल वाले नहीं होते हैं। अन्य शब्दों में, इनमें धनात्मक ढाल वाले खंड भी होते हैं। चित्र 7.9 में उत्पादन फलन को सम-उत्पाद वक्रों के समूह के रूप में दर्शाया गया है जिनमें धनात्मक ढाल वाले खंड हैं।

आइये, हम सम-उत्पाद वक्र P_3 पर विचार करें। इस सम-उत्पाद वक्र के AB खंड का ऋणात्मक ढाल है। बिंदु A तथा B से परे, इस सम-उत्पाद वक्र का ढाल धनात्मक है। इसी प्रकार, अन्य सम-उत्पाद वक्रों के भी ऐसे बिंदु हैं जहाँ पीछे की ओर मुड़ते हैं अर्थात् वे धनात्मक ढाल वाले हो जाते हैं। इन बिंदुओं को मिलाने वाली रेखाओं OK तथा OL को कटक (रिज) रेखाएं कहते हैं। यह उत्पादन के आर्थिक क्षेत्र की सीमाओं का निर्माण करती है। चित्र 7.9 में दर्शाए किसी भी सम-उत्पाद वक्र का ध्यानपूर्वक विवेचन इसी को स्पष्ट करता है।

मान लीजिये सम-उत्पाद वक्र P_3 द्वारा दर्शाए गए उत्पाद स्तर का उत्पादन करना है। इस मात्रा का उत्पादन करने के लिए, पूँजी की न्यूनतम OK_2 मात्रा की आवश्यकता होगी क्योंकि इससे कम कोई मात्रा उत्पादक को उत्पाद के P_3 स्तर को प्राप्त नहीं करने देगी। पूँजी की OK_2 मात्रा के साथ, श्रम की OL_2 मात्रा लगानी आवश्यक होगी। यदि उत्पादक पूँजी की OK_2 मात्रा के साथ, श्रम की OL_2 से कम मात्रा का प्रयोग करता है, उसका उत्पादन स्तर, सम-उत्पाद वक्र P_3 द्वारा दर्शाए गए उत्पादन स्तर से भी कम उत्पादन हो सकता है। उत्पादन के P_3 स्तर को बनाए रखने के लिए श्रम आगत की अधिक मात्रा के साथ, पूँजी आगत की भी अधिक मात्रा का प्रयोग करना होगा। ज़ाहिर है यह कुछ ऐसा है जिसका प्रयास कोई तर्कशील उत्पादक नहीं करेगा क्योंकि इसमें संसाधनों का अपमितव्ययी प्रयोग शामिल है।

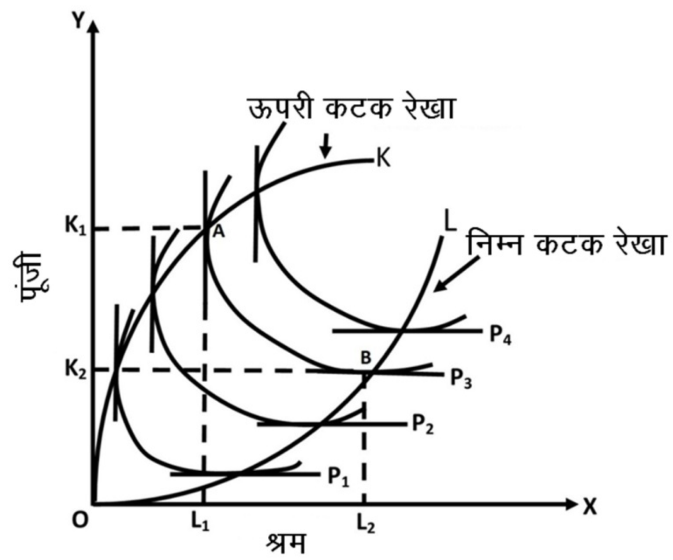

चित्र 7.9 : ऊपरी तरफ की रेखा OK तथा नीचे की तरफ की रेखा OL द्वारा परिवृत्त क्षेत्र, उत्पादन के आर्थिक क्षेत्र को इंगित करता है।

सम-उत्पाद वक्र P_3 पर बिंदु B श्रम के लिए गहनता सीमांत को दर्शाता है क्योंकि, पूँजी आगत की स्थिर मात्रा OK_2 के साथ श्रम आगत की मात्रा में OL_2 बिंदु के आगे की गई किसी वृद्धि के परिणामस्वरूप उत्पादन के स्तर में वृद्धि नहीं होती है।

इस बिंदु पर, श्रम का सीमांत उत्पाद शून्य है तथा इस प्रकार पूँजी के लिए श्रम की तकनीकी प्रतिस्थापन की सीमांत दर ($MRTS_{LK}$) शून्य है। इसका तात्पर्य यह है कि बिंदु B पर पूँजी के लिए श्रम का प्रतिस्थापन अधिकतम सीमा तक हो चुका है। इसी प्रकार, चित्र 7.9 में कटक रेखा OL के दायीं ओर, हमें श्रम की तृतीय अवस्था प्राप्त होती है।

इसी प्रकार, उत्पाद के P_3 स्तर का उत्पादन करने के लिए, श्रम आगत की न्यूनतम OL_1 मात्रा की आवश्यकता होगी। श्रम आगत की कोई भी कम मात्रा, उत्पादक को उत्पादन का P_3 स्तर प्राप्त नहीं करने देगी। श्रम की OL_1 मात्रा के साथ, पूँजी की OK_1 मात्रा का प्रयोग करना आवश्यक है तथा पूँजी आगत में OK_1 के आगे किसी भी वृद्धि के परिणामस्वरूप उत्पादन में वृद्धि नहीं होगी। यह बिंदु पूँजी की गहन सीमा को दर्शाता है क्योंकि श्रम आगत की OL_1 स्थिर मात्रा के साथ, पूँजी की मात्रा में OK_1 बिंदु से आगे वृद्धि, उत्पादन को बढ़ा नहीं पाती। P_3 के ऊपर बिंदु A पर, श्रम के लिए पूँजी का प्रतिस्थापन अधिकतम सीमा तक हो चुका है। इसलिए चित्र 7.9 में, ऊपरी रिज रेखा OK, पूँजी के लिए तृतीय अवस्था है। श्रम के लिए पूँजी की तकनीकी प्रतिस्थापन की सीमांत दर (MRTSKL) शून्य है, जिसका अर्थ है कि पूँजी के लिए श्रम की तकनीकी प्रतिस्थापन की सीमांत दर (MRTSKL) अनन्त या अपरिभाषित है।

चित्र 7.9 में, रेखा OK पूँजी के शून्य सीमांत उत्पाद के बिंदुओं को मिलाती है। हम इसे **ऊपरी कटक (रिज) रेखा** का नाम देते हैं। इसी प्रकार, OL रेखा को **निम्न कटक रेखा** के रूप में नामित किया है, यह श्रम के शून्य सीमांत उत्पाद के बिंदुओं को जोड़ती है।

श्रम तथा पूँजी आगतों के विभिन्न संयोजनों को मिलाकर OK तथा OL कटक रेखाओं के बीच बनने वाला क्षेत्र, दोनों संसाधनों के उत्पादन की सामान्य अवस्था II का निर्माण करता है। ये वे संयोजन हैं जो उत्पादन निर्णय से संबंधित हैं।

7.5 साधनों का सर्वोत्तम (इष्टतम) संयोजन तथा उत्पादक का संतुलन

अभी तक, हमने इस बात की व्याख्या की कि कैसे आगतों के विभिन्न संयोजन, उत्पादक को उत्पाद के निश्चित स्तरों को हासिल करना संभव बनाती है। उत्पादक इन आगतों के संयोजन में से किसी एक का चुनाव करने के लिए स्वतंत्र होता है। यदि वह एक नियत उत्पाद की उत्पादन लागत को न्यूनतम करना चाहता है तो उसका चयन मनमाना नहीं हो सकता अब हमारा कार्य इसकी व्याख्या करना है कि कैसे उत्पादक एक निश्चित आगत संयोजन का चुनाव करता है।

7.5.1 आगत कीमतें तथा सम-लागत रेखाएँ

एक उत्पादक यह कोशिश करता है कि कैसे दी हुई निश्चित लागत पर उत्पाद को अधिकतम किया जाए या विकल्प के रूप में, वह चाहेगा कि कैसे एक दिए गए उत्पादन के स्तर की लागत को न्यूनतम किया जाए। दोनों स्थितियों में, दो आगतों, यानी श्रम तथा पूँजी की अनुकूलतम मात्रा का चयन करने के लिए, उसे इन आगतों की भौतिक उत्पादकता के साथ-साथ इनकी कीमतों पर भी विचार करना होगा। जबकि सम-उत्पाद वक्र आगतों की उत्पादकता को दर्शाता है, इनकी कीमतों को सम लागत रेखाओं द्वारा दर्शाया जाता है।

एक सम-लागत रेखा आगतों के उन संयोजनों को दर्शाती है जो एक निश्चित व्यय राशि से क्रय किए जा सकते हैं; अर्थात्, उत्पादक का बजट।

एक फर्म या उत्पादक को आगतों या साधनों का बाज़ार से क्रय करना होता है। हमारी वर्तमान चिंता यह नहीं है कि बाज़ार में श्रम तथा पूँजी की कीमत कैसे निर्धारित होती है। और यही नहीं, एक फर्म इस स्थिति में भी नहीं होती कि वह आगतों की कीमतों को प्रभावित कर सके, जब तक वह एक क्रेताधिकारी या अल्प-क्रेताधिकारी नहीं है। अन्य शब्दों में, श्रम तथा पूँजी की कीमतों को प्रतियोगी साधन बाज़ार में कार्य करने वाली फर्म, तो स्वीकार मात्र करती है। आइए, अब हम कल्पना करते हैं कि एक फर्म का श्रम तथा पूँजी पर कुल व्यय रु.1000 है फर्म इस समस्त राशि को श्रम या पूँजी या श्रम तथा पूँजी दोनों के किसी संयोजन पर जैसा वह व्यय करना चाहे, व्यय करने के लिए स्वतंत्र है। चित्र 7.10 में, हमने दर्शाया है कि यदि फर्म समस्त राशि को श्रम आगत पर व्यय करने का चुनाव करती है, यह श्रम की OL_2 मात्रा को लगा सकती है तथा यदि समस्त राशि को पूँजी पर व्यय किया जाता है, यह पूँजी की OK_2 मात्रा प्राप्त कर सकती है। सीधी रेखा $K_2 L_2$ एक सम-लागत रेखा है जो श्रम तथा पूँजी के वे सभी संयोजन को दर्शाती है जिन्हें फर्म रु.1000 में प्राप्त कर सकती है। चित्र OL_2 में की लंबाई, OK_2 की लंबाई से दोगुनी है जिसका अर्थ यह है कि श्रम आगत की एक इकाई की कीमत, पूँजी आगत की एक इकाई की कीमत से आधी है। रेखा $K_2 L_2$ का ढाल आगतों की कीमतों के अनुपात को दर्शाता है। हालांकि सम-लागत रेखा का ढाल (w/r) है, जो श्रम की कीमत (w) का पूँजी की कीमत (r) से अनुपात है जब X अक्ष श्रम आगत को दर्शाता है तथा Y अक्ष पूँजी आगत को दर्शाता है। हम, इस प्रकार से सामान्यीकरण कर सकते हैं कि सम-लागत वक्र, जो सदैव रेखीय होती है, क्योंकि एक फर्म का आगतों की कीमतों पर कोई नियंत्रण नहीं होता तथा साधन कीमतें समान रहती हैं चाहे फर्म इन आगतों की कितनी भी मात्रा का क्रय करें।

$$\text{ढाल} = \frac{\Delta K}{\Delta L} = \frac{K}{L} = \frac{\text{उत्पादन व्यय}}{r} / \frac{\text{उत्पादन व्यय}}{w} = \frac{w}{r}$$

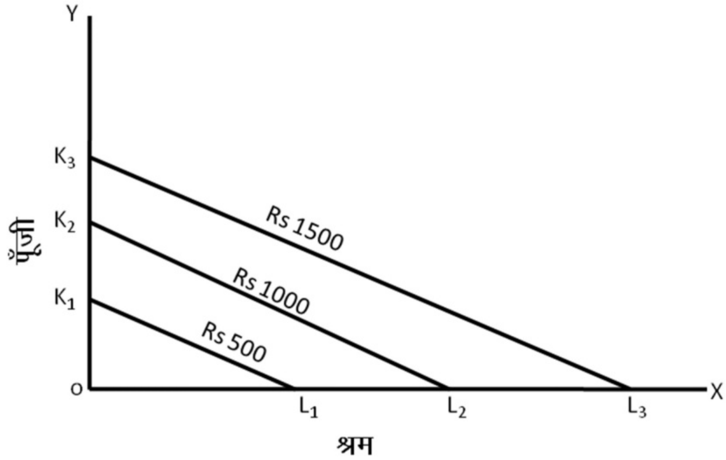

चित्र 7.10: सम-लागत रेखाएं—एक उच्च सम-लागत रेखा, उच्च लागत को दर्शाती है

सम-लागत रेखा की यह विशेषता बिल्कुल उपभोक्ता की बजट रेखा के समान है। हालांकि, इन दोनों रेखाओं के बीच में एक महत्त्वपूर्ण अंतर है। क्योंकि, एक उपभोक्ता का बजट निरपवाद रूप से स्थिर रहता है, उसकी केवल एक बजट रेखा होती है। एक फर्म के ऊपर इस प्रकार की कोई बाध्यता नहीं होती तथा इसलिए उसकी एक से अधिक सम-लागत रेखाएं हो सकती हैं। चित्र 7.10 में, हमने 3 सम-लागत रेखाएं दर्शाई हैं। यह इससे भी कहीं अधिक हो सकती हैं जो फर्म के द्वारा उत्पादन के विभिन्न स्तरों को प्राप्त करने के लिए की गई लागत पर व्यय की योजना के अनुसार होती है।

दाईं ओर की सबसे दूर की सम-लागत रेखा उच्चतम लागत को दर्शाती है, तथा जो मूल बिंदु के नज़दीक होती है वह निम्नतम लागत को दर्शाती है।

7.5.2 एक दी गई लागत पर अधिकतम उत्पाद

एक तर्कशील उत्पादक से एक दी गई लागत पर उत्पादन को अधिकतम करने की अपेक्षा की जाती है। वैकल्पिक तौर पर, वह एक दिए गए उत्पादन के स्तर पर लागत को न्यूनतम करने का प्रयास करता है।

इस भाग में, हम यह व्याख्या करेंगे कि कैसे एक उत्पादक दी गई लागत पर, अपने उत्पाद को अधिकतम करता है। मान लीजिए कि एक उत्पादक का लागत व्यय C है तथा पूँजी और श्रम की कीमतें क्रमशः r तथा w हैं। इन लागत स्थितियों की दशा में, उत्पादक, उत्पादन के अधिकतम स्तर को प्राप्त करने का प्रयास करता है।

चित्र 7.11 में, KL सम-लागत रेखा आगत कीमतों r तथा w पर, लागत व्यय को दर्शाता है। P_1, P_2 तथा P_3 सम-उत्पाद वक्र हैं जो उत्पादन के विभिन्न तीन स्तरों को दर्शाती हैं। यहां यह ध्यान दिया जाए कि उत्पादन का P_3 स्तर अप्राप्य है क्योंकि उपलब्ध साधन (सम-लागत रेखा KL द्वारा श्रम-पूँजी के विभिन्न उपलब्ध संयोजनों को दर्शाया गया है) इस उत्पाद स्तर तक पहुंचने के लिए अपर्याप्त हैं। वास्तव में, सम-लागत रेखा KL से बाहर की ओर कोई भी उत्पाद स्तर अप्राप्य है। उत्पादक, हालांकि, OKL क्षेत्र में किसी भी उत्पाद स्तर को प्राप्त कर सकता है, किंतु इसके लिए सभी संसाधनों की आवश्यकता नहीं होगी (श्रम तथा पूँजी आगतों) जो उत्पादक को उसके लागत व्यय में उपलब्ध है। इसलिए, दी गई लागत की स्थिति में, उत्पादक का प्रयास उस समुत्पाद वक्र तक पहुंचने का होता है जो अधिकतम उत्पाद स्तर को प्रस्तुत करता है। उत्पादक R तथा T जैसे बिंदुओं पर उत्पादन कर सकता है। इन दो बिंदुओं पर,

उत्पादन के स्तर P_1 का उत्पादन करने के लिए श्रम तथा पूँजी के विभिन्न संयोजन सम-लागत रेखा KL द्वारा दर्शाई गई लागत पर उपलब्ध है। इसके विपरीत, बिंदु S पर, श्रम तथा पूँजी का संयोजन समान लागत पर उपलब्ध है (क्योंकि यह भी सम-लागत रेखा KL पर स्थित है)। यह उत्पादक को सम-उत्पाद वक्र P_2 पर पहुंचने में सक्षम बनाता है जो द्वारा P_1 दर्शाए गए उत्पादन की स्तर से अधिक उत्पादन को दर्शाता है। क्योंकि बिंदु इस पर सम-उत्पाद वक्र P_2, सम-लागत रेखा KL की स्पर्श रेखा है, तो P_2 से अधिक उत्पादन का स्तर, दिए गए लागत के स्तर पर प्राप्त करना संभव नहीं है। इससे कम उत्पादन कुशल नहीं होगा क्योंकि उत्पादन में वृद्धि बिना किसी अतिरिक्त लागत को सहन करते हुए की जा सकती है। अतः उत्पादन के साधनों का सर्वश्रेष्ठ (इष्टतम) संयोजन, यानी पूँजी तथा श्रम जो पूँजी की OK_2 मात्रा तथा श्रम की OL_2 मात्रा है, उत्पादक को दी गई लागत की शर्तों पर, उत्पादन के संभावित उच्चतम स्तर तक पहुंचने में उसे सक्षम बनाता है।

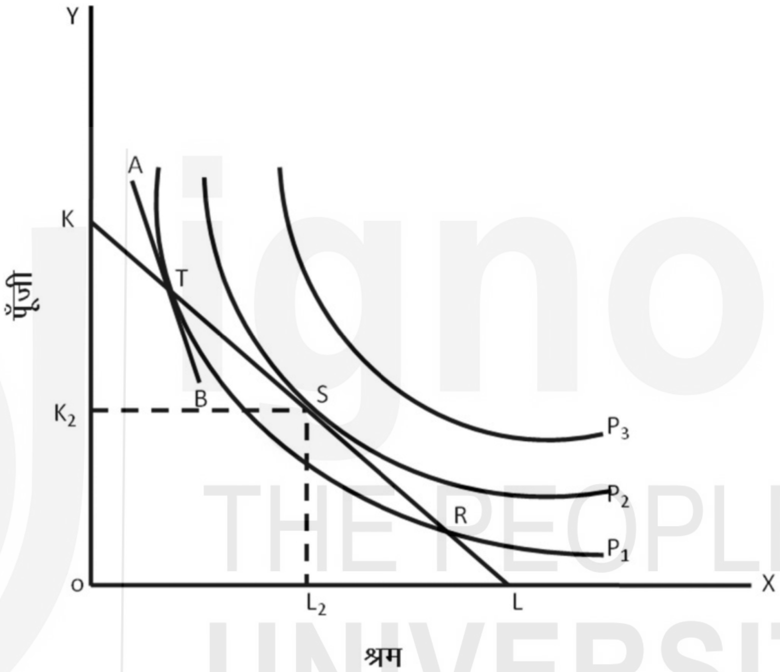

चित्र 7.11 : दी गई लागत रेखा KL के साथ, P_2 उच्चतम सम-उत्पाद वक्र है जिसे उत्पादक प्राप्त कर सकता है, इस सम-उत्पाद वक्र पर स्थित बिंदु S, इस उत्पादक के संतुलन को दर्शाता है

ऊपर दिए गए कथन उन सभी के लिए सहज स्पष्ट होंगे जिन्होंने उपभोक्ता व्यवहार के सिद्धांत का अध्ययन किया है। साथ ही, इसके पीछे जो कारण है वह भी ध्यानपूर्वक समझना होगा। हम मान लेते हैं कि एक उत्पादक T बिंदु पर उत्पादन करना चाहता है। बिंदु T पर, पूँजी के लिए श्रम की सीमांत तकनीकी प्रतिस्थापन की दर जो, स्पर्श रेखा AB के ढाल द्वारा दर्शायी गई है, अपेक्षाकृत अधिक है। मान लीजिए, ΔK (पूँजी में परिवर्तन) 3 इकाइयों के बराबर है तथा ΔL (श्रम में परिवर्तन) एक इकाई के बराबर है। इस प्रकार से, स्पर्श रेखा AB का ढाल 3:1 है जिसका तात्पर्य है कि बिंदु T पर श्रम की एक इकाई, पूँजी की 3 इकाइयों की प्रतिस्थापन कर सकती है। तथापि, KL के ढाल द्वारा दर्शायी गई सापेक्ष साधन कीमत कम है, यहां कहें, 0.7 : 1 है जिसका अर्थ यह है कि श्रम की 1 इकाई की लागत, पूँजी की 0.7 इकाई की लागत के समान है। इसलिए, उत्पादक की ओर से यह तर्कशील होगा कि वह श्रम को पूँजी से तब तक प्रतिस्थापित करें जब तक पूँजी के लिए श्रम की सीमांत तकनीकी प्रतिस्थापन दर, साधन कीमतों के अनुपात, अर्थात् श्रम की कीमत का पूँजी के कीमत से अनुपात के समान न हो जाए।

बिंदु R पर, विपरीत परिस्थिति प्रचलित है क्योंकि सीमांत तकनीकी प्रतिस्थापन दर, साधन कीमत अनुपात से कम है।

एक उत्पादक दी गई लागत पर उत्पादन अधिकतम करता है (संतुलन पर पहुंचता है), ऐसा केवल तब होता है जब पूँजी के लिए श्रम की सीमांत तकनीकी प्रतिस्थापन दर, पूँजी की कीमत से श्रम की कीमत के अनुपात के समान होती है।

इस प्रकार, $MRTS_{LK} = \frac{w}{r} = \frac{MP_L}{MP_K}$

7.5.3 दिए गए उत्पादन के स्तर पर न्यूनतम लागत

यदि एक उत्पादक चाहता है कि एक दिए गए उत्पादन की मात्रा के उत्पादन की लागत न्यूनतम हो जाए बजाय इसके कि एक निर्धारित लागत पर उत्पादन अधिकतम हो, उसके संतुलन की शर्तें औपचारिक रूप से समान ही रहती हैं। अर्थात्, सीमांत तकनीकी प्रतिस्थापन की दर, साधन कीमत अनुपात के समान रहती है।

इसे चित्र की सहायता से सरलता से समझा जा सकता है। चित्र 7.12 में, एकमात्र सम-उत्पाद वक्र P है जो उत्पादन के वांछित स्तर को दर्शाता है, परंतु यहां सम-लागत रेखाओं का समूह है जो कुल लागत व्यय के विभिन्न स्तरों को दर्शा रही है। मूल बिंदु के समीप की सम-लागत रेखा कम कुल लागत व्यय को दर्शाता है। सभी सम-लागत रेखाएँ समानांतर हैं तथा इसलिए इनका समान ढाल w/r है क्योंकि यह इस मान्यता के आधार पर खींची गई हैं कि साधनों की कीमतें स्थिर हैं।

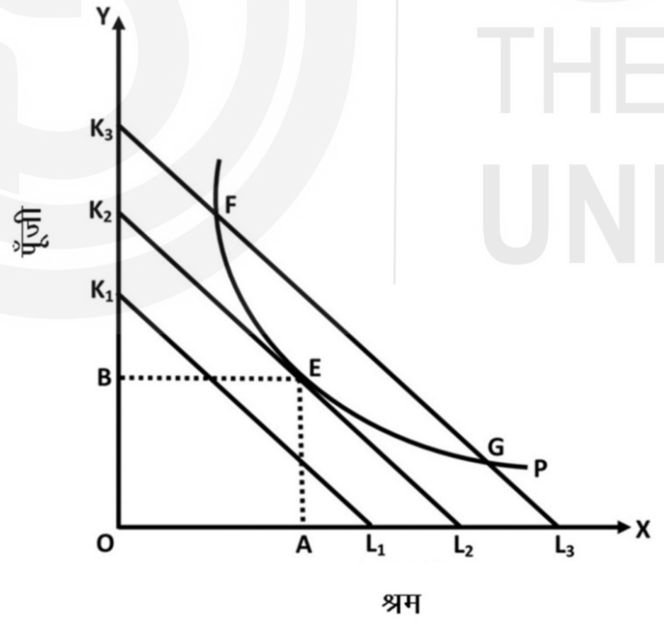

चित्र 7.12 : सम-उत्पाद वक्र P द्वारा दर्शाए गए उत्पादन के स्तर को प्राप्त करने के लिए, जो न्यूनतम लागत व्यय करनी आवश्यक है, सम-लागत रेखा K_2L_2 के बिंदु E पर दिखाई गई है। इसलिए, बिंदु E उत्पादक के संतुलन के बिंदु को दर्शाता है

यहां यह ध्यान दिया जाए कि सम-लागत रेखा $K_1 L_1$ अभी यहां प्रासंगिक नहीं है क्योंकि सम-उत्पाद वक्र P द्वारा दर्शाया गया उत्पादन का स्तर इस सम-लागत रेखा के किसी भी साधनों के संयोजन द्वारा उत्पादित नहीं किया जा सकता। तथापि, उत्पाद स्तर P का उत्पादन, बिंदु F तथा G द्वारा दर्शाए गए साधन संयोजनों से हो सकता है,

जो सम-लागत रेखा $K_3 L_3$ पर स्थित है। वैकल्पिक रूप से उत्पादक, उत्पाद स्तर P को बिंदु E द्वारा दर्शाए गए साधन संयोजन, जो सम-लागत रेखा $K_2 L_2$ पर स्थिति है, से उत्पादित कर सकता है। क्योंकि सम-लागत रेखा $K_2 L_2$ सम-लागत रेखा $K_3 L_3$ की तुलना में मूल बिंदु के अधिक समीप है, यह अपेक्षाकृत निम्न लागत को दर्शाती है। इसलिए, बिंदु F से E या बिंदु G से E पर विचलन करने पर (जाने पर), उत्पादक को समान उत्पाद स्तर एक निम्न लागत पर प्राप्त होता है। उत्पादक, इसलिए अपनी लागतों को न्यूनतम करने के लिए पूँजी की OB मात्रा को, श्रम की OA मात्रा के साथ लगाता है, जिसका निर्धारण सम-उत्पाद वक्र P के साथ सम-लागत रेखा $K_2 L_2$ के स्पर्श बिंदु पर होता है। बिंदु E से नीचे के साधन संयोजनों को दर्शाने वाले बिंदुओं को निःसंदेह अधिक प्राथमिकता दी जाएगी क्योंकि यह निम्न लागतों को दर्शाते हैं किंतु इन पर विचार नहीं किया जा सकता, क्योंकि वे सम-उत्पाद वक्र P द्वारा दर्शाए गए उत्पाद स्तर को उत्पादित करने में सहायक नहीं हैं। बिंदु E से ऊपर के बिंदु अधिक लागत को दर्शाते हैं। अतः, बिंदु E सम-उत्पाद वक्र P द्वारा दर्शाए गए उत्पाद स्तर के उत्पादन के लिए साधनों, यानी पूँजी तथा श्रम, के संयोजनों की न्यूनतम लागत को दर्शाता है। इस प्रकार, यह चर्चा हमें इस सिद्धांत पर पहुंचाती है कि उत्पादक के संतुलन की स्थिति में, पूँजी के लिए श्रम की सीमांत तकनीकी प्रतिस्थापन दर, श्रम की कीमत से पूँजी की कीमत के अनुपात के बराबर होती है। हमारी इस चर्चा का सारांश निम्न प्रकार से है :

1. **साधनों का सर्वोत्तम संयोजन, चाहे उत्पादक दी गई लागत पर उत्पादन को अधिकतम करना चाहता है या एक निश्चित उत्पाद स्तर के लिए लागत को न्यूनतम करना चाहता है, वहां होता है जहां सीमांत तकनीकी प्रतिस्थापन दर, साधन कीमतों के अनुपात के बराबर होती है।**
2. **एक उत्पादक संतुलन की स्थिति में होता है जब उसके साधनों का सर्वोत्तम (इष्टतम) संयोजन होता है।**

7.6 विस्तार पथ

सभी उत्पादक अपने उत्पादन का अल्पकाल तथा दीर्घकाल दोनों में विस्तार कर सकते हैं। दीर्घकाल में, उत्पादन में विस्तार सभी परिवर्ती साधनों के साथ, जबकि अल्पकाल में, उत्पादन का विस्तार कुछ स्थिर साधनों तथा कुछ परिवर्ती साधनों के साथ संभव होता है। हम दोनों स्थितियों पर विचार करेंगे।

7.6.1 दीर्घकाल में सर्वोत्तम (इष्टतम) विस्तार पथ

दीर्घकाल में, उत्पादन के विस्तार की कोई सीमा नहीं होती है क्योंकि उत्पादन के सभी साधन परिवर्ती होते हैं। हर फर्म का लक्ष्य अपने लाभ को अधिकतम करना होता है। इसके लिए वह उत्पादन में विस्तार सर्वोत्तम (इष्टतम) तरीके से करना चाहती है। दी गई साधन कीमतों के साथ, सर्वोत्तम विस्तार पथ, क्रमिक सम-लागत रेखाओं तथा क्रमिक सम-उत्पाद वक्रों के स्पर्श रेखा बिंदुओं को मिलाने वाला बिंदु पथ है।

अब चित्र 7.13 पर विचार करें। दी गई साधन कीमतों पर, सम-उत्पाद वक्र P_1 के अनुरूप उत्पाद का निम्नतम लागत पर उत्पादन बिंदु A पर हो सकता है जहां सम-लागत रेखा $K_1 L_1$, सम-उत्पाद वक्र P_1 की स्पर्श रेखा है। यह उत्पाद संतुलन की आरंभिक स्थिति है। यह मानते हुए कि साधन कीमतें समान रहती हैं, मान लीजिये, उत्पादक, उत्पादन में सम-उत्पाद वक्र P_2 द्वारा दर्शाए गए उत्पादन के स्तर तक विस्तार करना चाहता है। यह सम-लागत रेखा को $K_1 L_1$ से $K_2 L_2$ पर खिसका देगा। नया संतुलन बिंदु B पर प्राप्त होगा जहां सम-लागत रेखा $K_2 L_2$, सम-उत्पाद वक्र

P_2 की स्पर्श रेखा है। आगे भी, उत्पादन के स्तर में, सम-उत्पाद वक्र P_3 के अनुरूप विस्तार, संतुलन को बिंदु C पर खिसका देगा, जहां सम-लागत रेखा $K_3 L_3$, सम-उत्पाद वक्र P_3 की स्पर्श रेखा है।

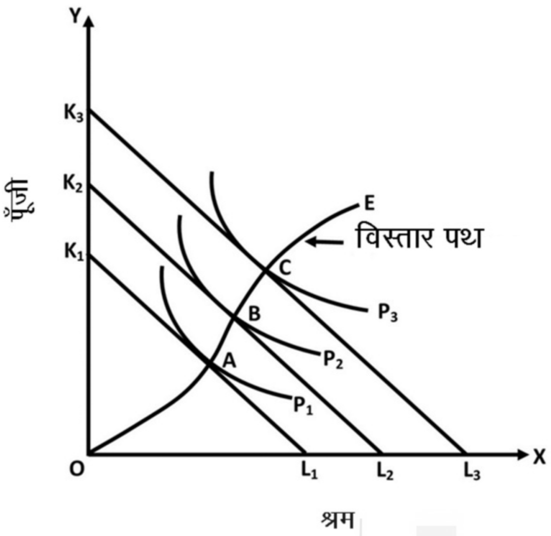

चित्र 7.13 : ग़ैर-रेखीय उत्पादन फलन की स्थिति में विस्तार पथ

उत्पादक संतुलन के सभी बिंदुओं, जैसे कि A, B तथा C को मिलाने पर, हमें वक्र OE प्राप्त होता है जो विस्तार पथ कहलाता है। **क्योंकि विस्तार पथ का प्रत्येक बिंदु उत्पादक के संतुलन के बिंदु को दर्शाता है, यह उत्पादन के कुछ निश्चित स्तरों पर उत्पादन के साधनों के सर्वोत्तम संयोजन को दर्शाता है।** यहां यह स्मरण किया जा सकता है कि उत्पादक संतुलन का प्रत्येक बिंदु, तकनीकी प्रतिस्थापन की सीमांत दर तथा साधन की अनुपात को सदैव समान (स्थिर) माना जाता है, तो तकनीकी प्रतिस्थापन की सीमांत दर भी समान रहेगी। अतः OE एक समढाल वक्र है जिसके साथ उत्पाद में विस्तार होता है जब साधन कीमतें स्थिर (समान) रहती हैं। रेखीय समरूप उत्पादन फलन की स्थिति में, समढाल रेखाएं, मूल बिंदु से गुज़रने वाली सीधी रेखाएं होती हैं। इसलिए, विस्तार पथ भी एक सीधी रेखा होगा, जैसा चित्र 7.14 में दर्शाया गया है। इसका अर्थ यह है कि दी गई उत्पादन साधनों की कीमत पर, फर्म के उत्पाद या आगत बजट के आकार में परिवर्तन के साथ फर्म के आगतों के सर्वोत्तम अनुपात में परिवर्तन नहीं होता है।

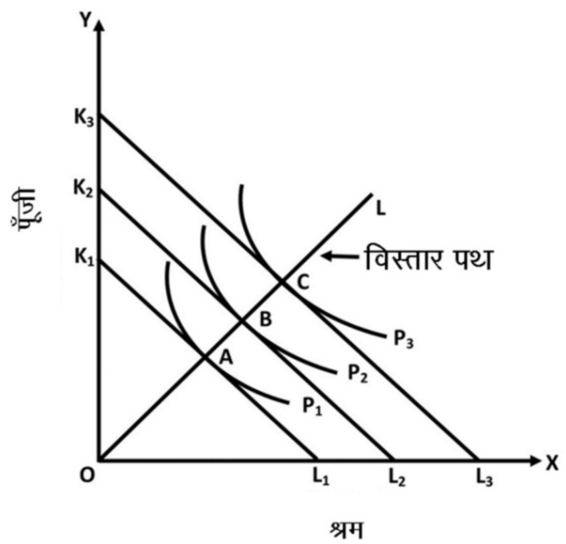

चित्र 7.14 : रेखीय समरूप उत्पादन फलन की स्थिति में विस्तार पथ एक सीधी रेखा है

फर्म का विस्तार पथ, क्रमिक सम-लागत रेखाओं तथा क्रमिक सम-उत्पाद वक्रों के स्पर्श बिंदुओं को मिलाने से बनने वाली रेखा है यह उत्पादन के प्रत्येक स्तर के लिए न्यूनतम लागत वाले आगत संयोजनों की पहचान करता है तथा दीर्घकाल की परिस्थिति में ऊपर की ओर ढालू होता है। इसका अर्थ यह है कि फर्म जैसे-जैसे अपने उत्पादन का विस्तार करती है वह दोनों आगतों के प्रयोग में भी विस्तार करती है।

7.6.2 अल्पकाल में सर्वोत्तम (इष्टतम) विस्तार पथ

अल्पकाल में, पूँजी एक स्थिर साधन है तथा इस तरह इसकी मात्रा स्थिर रहती है। श्रम, हालांकि परिवर्ती है तथा उत्पादक श्रम की मात्रा में, जिस अक्ष पर यह साधन मापा गया है, उसके समानांतर एक सीधी रेखा के साथ वृद्धि करके अपने उत्पादन का विस्तार कर सकता है। चित्र 7.13 में, सीधी रेखा AB विस्तार पथ को दर्शाती है, अल्पकाल में पूँजी की कुल मात्रा OA पर स्थिर है।

उत्पादन के साधनों की कीमतें स्थिर रहने के साथ, फर्म अल्पकाल में पूँजी की स्थिर मात्रा की बाध्यता की वजह से, उत्पादन के विस्तार के दौरान अपने लाभ को अधिकतम नहीं कर सकती। यह चित्र 7.15 से समझा जा सकता है। फर्म का आरंभिक संतुलन बिंदु E पर है। जहां सम-लागत रेखा K_1L_1, सम-उत्पाद वक्र P_1 की स्पर्श रेखा है। यदि फर्म अपने उत्पादन स्तर को सम-उत्पाद वक्र P_2 के अनुरूप बढ़ाना चाहती है, यह बिंदु F पर पहुंच जाती है, जो दी गई साधन कीमतों पर, न्यूनतम लागत की स्थिति नहीं है। इससे आगे सम-उत्पाद वक्र P_3 के अनुरूप, उत्पादन के स्तर में विस्तार करने पर, फर्म को G बिंदु पर ले जाती है जो पुनः न्यूनतम लागत स्थिति को प्रदर्शित नहीं करता है। सर्वोत्तम (इष्टतम) विस्तार पथ तो OR हो सकता है, अगर फर्म के लिए पूँजी की मात्रा में वृद्धि करना संभव होता। हालांकि, दी गई पूँजी की मात्रा पर, फर्म के पास अल्पकाल में सिवाय सीधी रेखा AB पर विस्तार करने के कोई अन्य विकल्प नहीं होता।

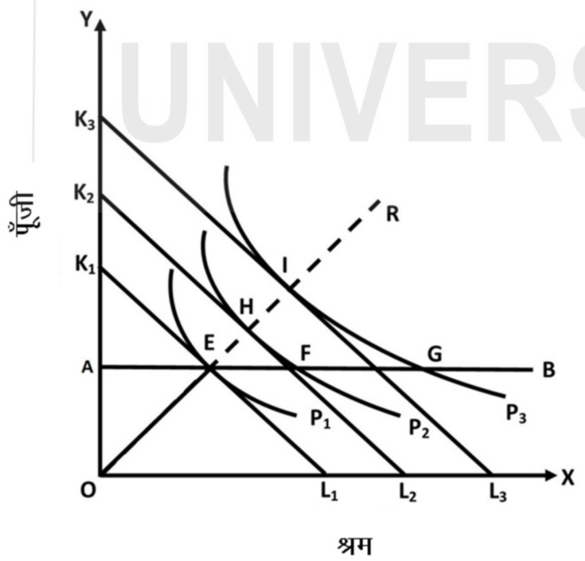

चित्र 7.15 : रेखीय समरूप उत्पादन फलन की स्थिति में अल्पकाल में विस्तार पथ

बोध प्रश्न 2

1) निम्नलिखित कथनों में से कौन-सा **सत्य** है और कौन-सा **असत्य**? बताइए।

   i) लाभ अधिकतम करने की स्थिति यह है कि सीमांत तकनीकी प्रतिस्थापन दर, साधन कीमत अनुपात से अधिक है।

ii) कटक (रिज) रेखाओं के बीच का क्षेत्र, दोनों संसाधनों के लिए उत्पादन की दूसरी अवस्था का निरूपण करता है।

iii) एक सम-लागत रेखा, आगतों के विभिन्न संयोजनों को दर्शाती है, जिन्हें एक दी गई व्यय राशि से क्रय किया जा सकता है।

iv) दाईं ओर सबसे दूर की सम-लागत रेखा उच्च लागत को दर्शाती है।

v) विस्तार पथ पर प्रत्येक बिंदु, उत्पादक के संतुलन बिंदु को दर्शाता है।

vi) क्रमिक सम-उत्पाद वक्रों और सम-लागत रेखाओं के स्पर्श बिंदुओं को मिलाने वाली रेखा फर्म के विस्तार पथ का निर्माण करती है।

2) उत्पादक के संतुलन की शर्तों की व्याख्या कीजिए।

....

....

....

3) मान लीजिए कि P_K= रु. 10, P_L = रु. 20 तथा कुल व्यय = रु. 160 है –

i) सम-लागत रेखा का ढाल क्या है?

ii) सम-लागत रेखा का समीकरण लिखिए।

....

....

....

4) एक सम-उत्पाद वक्र तथा एक सम-लागत रेखा के स्पर्श के महत्त्व की व्याख्या कीजिए।

....

....

....

5) व्याख्या कीजिए कि क्यों आगतों के न्यूनतम लागत संयोजन के लिए, एक फर्म के लिए यह आवश्यक है कि तकनीकी प्रतिस्थापन की सीमांत दर, आगतों के अनुपात के समान होनी चाहिए।

....

....

....

6) एक फर्म के विस्तार पथ का क्या अर्थ है? एक रेखीय समरूप उत्पादन फलन के संबंध में विस्तार पथ तथा एक ग़ैर-रेखीय उत्पादन फलन के संबंध में विस्तार पथ में अंतर कीजिए।

....

....

....

7.7 अनेक परिवर्ती संसाधनों वाले उत्पाद फलन

जब उत्पादन के सभी साधनों को (श्रम, पूँजी आदि) स्थिर तकनीक की स्थिति में एक साथ, एक ही अनुपात में बढ़ाया जाता है तब तीन संभावनाएं उत्पन्न होती हैं।

1) उत्पादन में वृद्धि संसाधनों के प्रयोग में वृद्धि के अनुपात से अधिक हो। यह पैमाने के वृद्धिमान प्रतिफल की स्थिति होगी।

2) उत्पादन में वृद्धि उसी अनुपात में हो जिसमें संसाधन प्रयोग को बढ़ाया गया है। यह पैमाने के स्थिर प्रतिफल की स्थिति होगी।

3) यदि उत्पादन में वृद्धि का अनुपात संसाधन प्रयोग में वृद्धि के अनुपात से कम रह जाए तो उसे हम पैमाने के ह्रासमान प्रतिफल की अवस्था कहेंगे।

पैमाने के प्रतिफल की संकल्पना का आशय उत्पाद की उन प्रवृत्तियों से है जहाँ विभिन्न संसाधनों के बीच अनुपात को स्थिर रखते हुए अनेक प्रयोग के पैमाने को बढ़ाया जाता है। अर्थात् सभी संसाधनों को एक ही अनुपात में परिवर्तित किया जाता है।

हम निम्न संख्यात्मक उदाहरण की सहायता से इन तीन स्थितियों को दर्शा सकते हैं।

उत्पाद तालिका – 1				
आगत X	**आगत Y**	**आगत में प्रतिशत परिवर्तन**	**उत्पाद**	**उत्पाद में प्रतिशत परिवर्तन**
2	4	100	1000	–
4	8	100	3000	200
8	16	100	10000	233
16	32	100	35000	250

दी गई उत्पाद तालिका 2 के अवलोकन से यह पता लगता है कि :

1) सभी अवस्थाओं में साधनों की मात्रा में सौ प्रतिशत की वृद्धि हो रही है।

2) साधनों की मात्रा में वृद्धि के साथ उत्पाद की मात्रा सभी अवस्थाओं में सौ प्रतिशत से अधिक बढ़ रही है। अन्य शब्दों में, उत्पाद में वृद्धि साधनों में वृद्धि की तुलना में अधिक अनुपात से हो रही है।

इस स्थिति की तुलना नीचे दिए गए उदाहरण से कीजिए :

उत्पाद तालिका – 2				
आगत X	**आगत Y**	**आगत में प्रतिशत परिवर्तन**	**उत्पाद**	**उत्पाद में प्रतिशत परिवर्तन**
2	4	100	1000	–
4	8	100	2000	100
8	16	100	4000	100
16	32	100	8000	100

दी गई उत्पाद तालिका 3 के अवलोकन से यह पता लगता है :

1) आगत प्रत्येक स्तर पर सौ प्रतिशत से बढ़ती है।

2) उत्पाद भी प्रत्येक स्तर पर सौ प्रतिशत ही बढ़ता है।

इस उदाहरण में, उत्पाद में वृद्धि, साधनों में वृद्धि के समान अनुपात में होती है।

अब इस स्थिति की तुलना नीचे दिए गए उदाहरण से कीजिए।

उत्पाद तालिका – 3

आगत X	आगत Y	आगत में प्रतिशत परिवर्तन	उत्पाद	उत्पाद में प्रतिशत परिवर्तन
2	4	100	1000	–
4	8	100	1800	80
8	16	100	2500	39
16	32	100	3000	20

इस उत्पाद तालिका 3 के अवलोकन से यह पता चलता है की कुल उत्पाद में वृद्धि सभी स्थितियों में आगतों में वृद्धि की तुलना में कम है।

7.7.1 पैमाने के बढ़ते प्रतिफल

जब उत्पादन के साधनों के बीच अनुपात को स्थिर रखा जाता है तथा पैमाने में विस्तार किया जाता है, आरंभ में उत्पाद में वृद्धि, उत्पादन के साधनों में वृद्धि की तुलना में अधिक अनुपात में होती है।

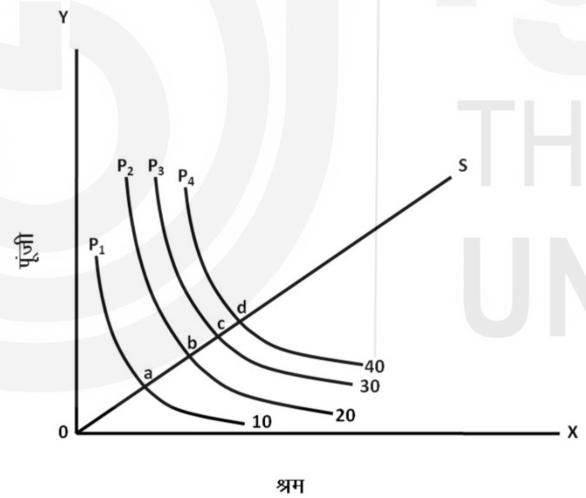

चित्र 7.16 : पैमाने के बढ़ते प्रतिफल– उत्पाद में वृद्धि, उत्पादन के साधनों में वृद्धि के अनुपात में अधिक है

उदाहरण के लिए, यदि साधनों को दोगुना किया जाता है उत्पाद दोगुने से अधिक हो जाता है। अन्य शब्दों में, उत्पाद की मात्रा को दोगुना करने के लिए, यह आवश्यक नहीं की उत्पादन के साधनों की मात्रा को दोगुना किया जाए। यह चित्र 7.16 की सहायता से समझा जा सकता है। इस रेखाचित्र में P_1, P_2, P_3, P_4 सभी सम-उत्पाद वक्र हैं। यह उत्पाद की क्रमशः 10, 20, 30, 40 इकाइयों को दर्शाता है। OS पैमाने की रेखा है जो सम-उत्पाद रेखाओं द्वारा असमान दूरी पर काटी जाती है। चित्र में देखा जा सकता है की $cd < bc < ab < oa$ इसका अर्थ है कि फर्म को एक सम-उत्पाद रेखा P_1 से दूसरी सम-उत्पाद रेखा P_2 पर बढ़ने के लिए (जिससे उत्पाद 10 इकाइयों से बढ़कर 20 इकाइयां हो जाए), आरंभ की 10 इकाइयों के उत्पादन के लिए आवश्यक उत्पादन के साधनों की तुलना में उत्पादन के साधनों की कम मात्रा की वृद्धि की आवश्यकता होगी। इसी प्रकार, उत्पाद को आगे की 10 इकाइयों बढ़ाने के लिए ताकि सम-उत्पाद रेखा P_3

पर पहुंच सके, उत्पादन के साधनों की कम अतिरिक्त मात्रा की आवश्यकता होगी। यही स्थिति सम-उत्पाद रेखा P_4 पर भी लागू होती है। यहां पैमाने के बढ़ते प्रतिफल लागू होने के तीन मुख्य कारण हैं।

1) **अविभाज्यताएं** : पैमाने के बढ़ते प्रतिफल लागू होने का सबसे मुख्य कारण 'तकनीकी तथा प्रबंधकीय' अविभाज्यताएं हैं। उत्पादन के साधन का अविभाज्य होने का अर्थ है की साधन के आकार का एक निश्चित न्यूनतम स्तर है और यदि यह उत्पाद के आकार की तुलना में बड़ा है, तो भी इसका प्रयोग होता है (इसका विभाजन नहीं हो सकता)। उदाहरण के लिए, यदि केवल 10 से 15 पत्र एक दफ्तर से भेजे जाने हैं तो भी एक टाइपराइटर को रखना आवश्यक होगा। यह संभव नहीं है की आधा टाइपराइटर क्रय कर लिया जाए क्योंकि प्रतिदिन केवल कुछ संख्या में पत्र टाइप करने हैं। इस प्रकार, हम कह सकते हैं, टाइपराइटर अविभाज्य है। इसके समरूप, आधुनिक कारखानों में संयंत्र तथा प्रबंधकीय सेवाएं अविभाज्य होती हैं। इसके अनुसार, आरंभ में जब उत्पादन के पैमाने को बढ़ाया जाता है, तब उत्पादन के साधनों की मांग की मात्रा में समान अनुपात से वृद्धि नहीं होती।

2) **विशिष्टीकरण** : चेंबरलिन, विभाज्यता को पैमाने के बढ़ते प्रतिफल का एक मुख्य कारण नहीं मानता। उसके अनुसार, पैमाने के बढ़ते प्रतिफल का मुख्य कारण विशिष्टीकरण है। जब श्रम के विभाजन के कारण, श्रमिकों को उनकी योग्यता के अनुसार कार्य दिया जाता है, उनकी उत्पादकता बढ़ती है साथ ही लागत घटती है। डोनाल्ड एस. वाटसन के अनुसार, इस तथ्य को स्वीकार करना उस मान्यता के विपरीत होगा जिसके अनुसार विभिन्न उत्पादन के साधनों का अनुपात समान रहता है। इस प्रकार, वह यह शंका जाहिर करते हैं कि विशिष्टीकरण पैमाने के बढ़ते प्रतिफल का एक कारण हो सकता है। विशिष्टीकरण का महत्त्व केवल तब स्वीकार किया जा सकता है जब हम यह मानें कि पैमाने में विस्तार के लिए श्रम तथा पूँजी की मात्रा में समान रूप से वृद्धि आवश्यक है, इस वृद्धि का अर्थ, लगाई गई इकाइयों की संख्या को दोगुना या तिगुना करना नहीं है, किंतु इसका अर्थ है उनकी स्थिर मुद्रा लागत में वृद्धि करना है। लेकिन यह तकनीकी परिवर्तन की ओर अग्रसर होता है तथा इसकी बहुत अधिक संभावना होती है कि बढ़ते प्रतिफल पैमाने में विस्तार के कारण पैदा नहीं होते अपितु तकनीकी कारणों की वजह से होते हैं।

7.7.2 पैमाने के स्थिर प्रतिफल

पैमाने के बढ़ते प्रतिफल केवल एक बिंदु तक प्राप्त किए जा सकते हैं। इस बिंदु पर पहुंचने के पश्चात, पैमाने में विस्तार केवल उत्पादन में समान अनुपात में वृद्धि करता है।

अनुभवजन्य साक्ष्य सुझाते हैं कि स्थिर प्रतिफल की अवस्था एक लंबी अवधि तक चलती है तथा यह अनेक वस्तुओं के संदर्भ में अनुभव की गई है। वैज्ञानिक दृष्टिकोण से, पैमाने के स्थिर प्रतिफल से अभिप्राय है कि जब उत्पादन के साधनों की मात्रा इस प्रकार बढ़ाई जाती है कि साधनों का अनुपात अपरिवर्तित रहता है, उत्पादन उसी समान अनुपात में बढ़ता है जिसमें साधनों में वृद्धि होती है। अन्य शब्दों में, साधनों की मात्रा दोगुनी होती है। उत्पादन भी दोगुना हो जाता है। इस प्रकार का उत्पादन फलन अधिकतर रेखीय समरूप उत्पादन फलन या प्रथम श्रेणी का समरूप उत्पादन फलन कहलाता है। पैमाने के प्रतिफल की अवस्था को चित्र 7.17 की सहायता से समझा जा सकता है, इस चित्र में, जब फर्म सम-उत्पाद रेखा P_3 से P_3, या सम-उत्पाद वक्र P_4 से P_5 या सम-उत्पाद वक्र P_5 से P_6 तक जाती है उसे पैमाने के स्थिर प्रतिफल प्राप्त होते हैं। पैमाने की रेखा पर $cd = de = ef$ इसी तथ्य को दर्शाता है।

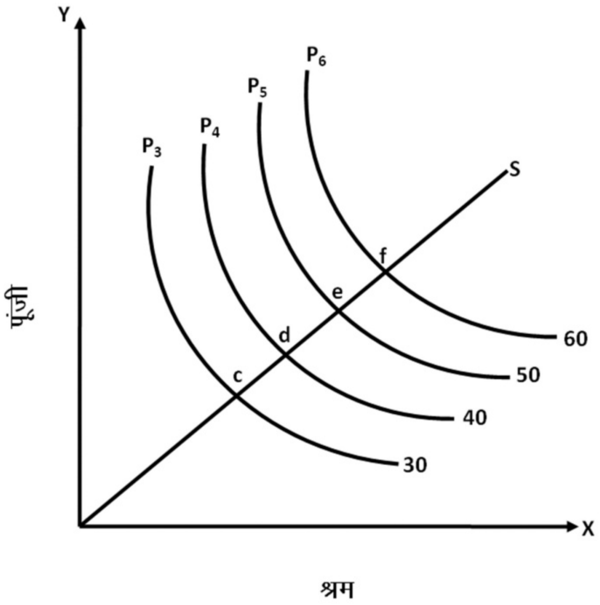

चित्र 7.17 : पैमाने की स्थिर प्रतिफल– उत्पादन समान अनुपात में बढ़ता है जिसमें आगतों में वृद्धि होती है

अब प्रश्न यह उठता है कि पैमाने के प्रतिफल के पीछे क्या कारण है। सामान्यतः जब छोटे स्तर पर उत्पादन करने की अकुशलता समाप्त हो जाती है तथा तकनीकी तथा प्रबंध की अविभाज्यता की कोई समस्या नहीं रहती, पैमाने में विस्तार एक ऐसी स्थिति की ओर अग्रसर होता है जहां प्रतिफल उत्पादन के साधनों के समान अनुपात में बढ़ते हैं। कुछ अर्थशास्त्री यह मानते हैं कि उत्पादन के किसी साधन की इकाई की विशेषता के लाभ बहुत कम होते हैं या यह लाभ उत्पादन के कम स्तर पर पहले ही प्राप्त किए जा चुके हैं, इसके बाद कुछ समय अवधि तक, उत्पादन में वृद्धि पैमाने के स्थिर प्रतिफल के नियम के अनुसार होती है।

अर्थशास्त्री यह तर्क देते हैं कि यदि उत्पादन के साधन पूर्णतया विभाजित किए जा सकते, तो उत्पादन फलन अनिवार्य रूप से पैमाने के स्थिर प्रतिफल ही दर्शाता है। उनके विचार में, यदि कुछ उद्योगों में पैमाने के प्रतिफल लागू नहीं होते, तो यह इन उद्योगों में कुछ साधनों की दुर्लभता या अविभाज्यता के कारण होता है, इन सभी को समान अनुपात में परिवर्तन करना संभव नहीं होता है। साधन की अविभाज्यता अधिकतर उत्पादन के कम स्तर पर इनके अनुप्रयोग को दर्शाती है। जब उत्पादक अधिक उत्पादन प्राप्त करने के लिए अन्य साधनों की मात्रा में वृद्धि करता है, तब कुछ साधनों की मात्रा में कोई नहीं वृद्धि होती (जिनका उत्पादन की कम स्तर पर पूर्ण प्रयोग नहीं हुआ है)। यह अर्थशास्त्री, यह नहीं सोचते की पैमाने की मितव्ययता तब प्राप्त होती है, जब उत्पादन के साधन पूर्णतया विभाजित होते हैं। हालांकि यह, उत्पादन में साधनों के अनुकूलतम अनुपात पर जोर देते हैं। जब उत्पादन के साधन पूर्णतया विभाजित होते हैं, तो उन्हें इतनी मात्रा में घटाया या बढ़ाया जा सकता है कि साधनों के अनुकूलतम अनुपात को प्राप्त किया जा सके। साधनों की मात्रा में कुशलता अनुपात में कमी या वृद्धि करके, पैमाने की किसी भी मितव्ययता या अपमितव्ययता के बिना उत्पादन की मात्रा को घटाया या बढ़ाया जा सकता है। अर्थ है कि पैमाने के प्रतिफल आवश्यक रूप से लागू होंगे।

7.7.3 पैमाने के ह्रासमान प्रतिफल

पैमाने के घटते प्रतिफल यह सुनिश्चित कर देते हैं कि उत्पादक फर्मों का आकार अनंत रूप से बड़ा नहीं हो सकता। सामान्यतः एक सीमा के पश्चात जब उत्पादन के साधनों की मात्रा में इस प्रकार वृद्धि की जाती है कि उत्पादन के साधनों का अनुपात अपरिवर्तित रहता है तो उत्पादन के साधनों की मात्रा में होने वाली वृद्धि की तुलना में

उत्पादन कम अनुपात में बढ़ता है। उदाहरण के लिए, यह हो सकता है कि श्रम तथा पूँजी की मात्रा में सौ प्रतिशत की वृद्धि होने पर उत्पादन की मात्रा में केवल 75% की वृद्धि हो। अन्य शब्दों में, यदि उत्पादन की मात्रा को दोगुना करना है, तब उत्पादन के साधनों की मात्रा को दोगुने से अधिक करना होगा। हम इस घटनाक्रम को चित्र 7.18 की सहायता से समझ सकते हैं। इस रेखाचित्र में, जब हम सम-उत्पाद रेखा P_6 पर है, पैमाने के स्थिर प्रतिफल की प्रवृत्ति अंत की ओर आ गई है। यहां से, दो लगातार सम-उत्पाद रेखाओं के बीच बढ़ता हुआ अंतर यह दर्शाता है कि उत्पादन की मात्रा में समान वृद्धि प्राप्त करने के लिए, उत्पादन के साधनों की मात्रा में वृद्धि लगातार बढ़ती दर से करनी होगी। पैमाने की OS रेखा पर, ij > hi > gh >fg > ef इसे स्पष्ट रुप से दर्शाते हैं।

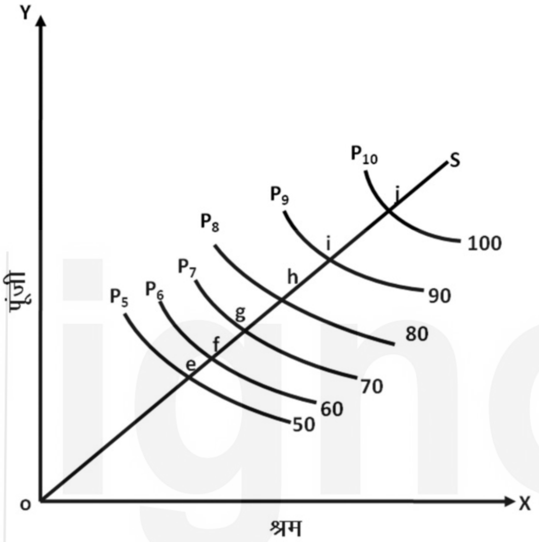

चित्र 7.18 : पैमाने के घटते प्रतिफल–साधनों की तुलना में उत्पादन कम अनुपात में बढ़ता है

अर्थशास्त्री उन कारणों पर सहमत नहीं हैं जो पैमाने के घटते प्रतिफल के क्रियान्वयन की ओर ले जाते हैं। फिर भी, वह दो कारण, जिनका आमतौर पर उल्लेख किया जाता है, इस प्रकार हैं :

1) **उद्यम** : कुछ अर्थशास्त्री इस बात पर जोर देते हैं कि उद्यम, उत्पादन का एक स्थिर तथा अविभाज्य साधन है तथा इसकी आपूर्ति में दीर्घकाल में भी वृद्धि नहीं की जा सकती। तद्नुसार, जब उत्पादन के अन्य साधनों की मात्रा में वृद्धि की जाती है तथा उत्पादन को प्रोत्साहन देने के लिए, उत्पादन के पैमाने में विस्तार किया जाता है, उद्यम की तुलना में अन्य साधनों के अनुपात में वृद्धि हो जाती है। एक निश्चित बिंदु के पश्चात, इसका परिणाम घटते प्रतिफल होता है क्योंकि अन्य साधनों की तुलना में उद्यम दुर्लभ हो जाता है।

2) **प्रबंधकीय कठिनाइयां** : कुछ अन्य अर्थशास्त्रियों के अनुसार, पैमाने के घटते प्रतिफल के लागू होने का मुख्य कारण प्रबंधकीय कठिनाइयां हैं। जब उत्पादन के पैमाने का विस्तार होता है, उत्पादन के विभिन्न साधनों का समन्वय तथा नियंत्रण कमजोर हो जाता है तथा इसलिए उत्पादन में, उत्पादन के साधनों में होने वाली वृद्धि के समान अनुपात में वृद्धि कर पाने में सफलता नहीं मिलती। इसका परिणाम पैमाने के घटते प्रतिफल होते हैं।

7.8 पैमाने की बाह्य मितव्ययताएं तथा अपमितव्ययताएं

पैमाने का विस्तार फर्म को अनेक प्रकार की मितव्ययताएं प्रदान करता है। इनमें से कुछ 'वास्तविक रूप' में होती हैं जबकि अन्य 'मौद्रिक रूप' में। वह मितव्ययताएं जो उत्पादन

कार्य, विपणन, प्रबंधन, यातायात, आदि के दौरान प्राप्त होती हैं 'वास्तविक रूप' में होती हैं, जबकि वह मितव्ययताएं जो आगतों को थोक मूल्य पर क्रय करने, निम्न ब्याज दर पर ऋण की उपलब्धता, विज्ञापन लागत में बचत, आदि के रुप में प्राप्त होती हैं, मौद्रिक रूप में होती हैं। फिर भी, कुछ इस प्रकार की मितव्ययताएं भी होती हैं जो उन फर्मों को प्राप्त नहीं होतीं जिनका उत्पादन का पैमाना बड़ा होता है, बल्कि, अन्य उन फर्मों को प्राप्त होती हैं जिन्हें इस फर्म के बड़े आकार का लाभ प्राप्त होता है।

अर्थशास्त्र में, वह मितव्ययताएं जो फर्म को अपने स्वयं के आकार के विस्तार करने से प्राप्त होती हैं वह आंतरिक मितव्ययताएं कहलाती हैं। इसके विपरीत, वह मितव्ययताएं जो फर्मों को अपने उत्पादन के कारण नहीं अपितु अन्य फर्म के उत्पादन के कारण होती हैं, वह बाह्य मितव्ययताएं कहलाती हैं ।

7.8.1 पैमाने की आंतरिक मितव्ययताएं

सामान्यतः, जब उत्पादन के पैमाने को बढ़ाना होता है, फर्म छोटे कारखाने को बड़े कारखाने में बदलती है। यह उत्पादन की कुशलता में वृद्धि करता है। हालांकि, यह सदैव आवश्यक नहीं कि उत्पादन के पैमाने में विस्तार करने के लिए कारखाने को बदला जाए। फर्म अपने पुराने कारखाने को चालू हालत में रख सकती है या समान प्रकार के नए कारखाने को स्थापित कर सकती है या कुछ नए प्रकार का नया कारखाना लगा सकती है। इन सभी विकल्पों में, फर्म विभिन्न प्रकार की अनेक मितव्ययता प्राप्त करती है। तथ्य यह है कि वह पैमाने की मितव्ययताएं ही हैं जो दीर्घकालिक औसत लागत वक्र की प्रकृति का निर्धारण करती हैं।

1) पैमाने की वास्तविक आंतरिक मितव्ययताएं

जब उत्पादन के पैमाने का विस्तार होता है, फर्म को कुछ वास्तविक आंतरिक मितव्ययताएं प्राप्त होती हैं। यह मितव्ययताएं फर्म को कच्चे माल की भौतिक मात्रा में बचत, श्रम, स्थिर तथा परिवर्ती पूँजी, अन्य आगतों के रूप में प्राप्त होती हैं। मोटे तौर पर कहें तो वास्तविक आंतरिक मितव्ययताएं चार प्रकार की होती हैं जो निम्नलिखित हैं: (i) उत्पादन मितव्ययताएं, (ii) विक्रय या विपणन की मितव्ययताएं, (iii) प्रबंधकीय मितव्ययताएं, तथा (iv) यातायात और भंडारण की मितव्ययताएं।

2) मौद्रिक आंतरिक मितव्ययताएं

जैसे-जैसे उत्पादन के पैमाने का विस्तार होता है फर्म को कुछ शुद्ध वित्तीय मितव्ययताएं प्राप्त होती हैं। इनमें से अधिक महत्त्वपूर्ण निम्नलिखित हैं :

1) एक बड़े आकार की फर्म, कच्चे माल के आपूर्ति कर्ताओं को कुछ निश्चित छूट तथा रियायत देने के लिए कह सकती है। कोई भी कच्चे माल के आपूर्तिकर्ता बड़ी फर्म के इस तरह के निवेदन को अनदेखा नहीं करता है।

2) पूँजी बाजार में सामान्यतः पूर्ण प्रतियोगिता नहीं पाई जाती है, क्योंकि बड़ी कंपनियों की पूँजी बाजार में अधिक साख होती है, वह बैंकों तथा वित्तीय संस्थाओं से कम ब्याज दर पर ऋण प्राप्त करने की स्थिति में होती हैं।

3) परिवहन कंपनियां भी रियायत तथा छूट देने को तत्पर हो जाती हैं यदि माल काफी हद तक बड़ी मात्रा में हो। यह फर्म को उत्पादन के पैमाने में विस्तार करके परिवहन लागतों में मितव्ययताएं प्राप्त करने में सक्षम बनाता है।

4) जब उत्पादन बड़ी मात्रा में होता है, फर्म को एक बड़े स्तर पर विज्ञापन पर व्यय करने की आवश्यकता होती है। किंतु, एक बड़े स्तर पर विज्ञापन देने पर संचार

माध्यमों से, जिनमें विज्ञापन दिया जा रहा है, अनेक प्रकार की छूट तथा रियायतें मिलती हैं।

7.8.2 पैमाने की आंतरिक अपमितव्ययताएं

यदि उत्पादन के पैमाने में लगातार विस्तार होता है तो यह संभव है कि एक निश्चित बिंदु के पश्चात, उत्पादन में वृद्धि, उत्पादन के साधनों में वृद्धि की तुलना में कम मात्रा में होगी। अनेक अर्थशास्त्री यह विश्वास करते हैं कि यह स्थिति उत्पन्न हो सकती है, तथा होती है, यदि उत्पादन को अनुकूलतम पैमाने के बिंदु से आगे ले जाया जाता है। इसके लागू होने के कारण इस प्रकार हैं :

1) **उत्पादन के साधनों की उपलब्धता की सीमाएं :** उत्पादन के साधन, उत्पादन के स्थान पर सदैव सीमित मात्रा में उपलब्ध होते हैं। जब उत्पादन के पैमाने को एक निश्चित बिंदु के पश्चात बढ़ाया जाता है, यह संभव नहीं रहता कि साधनों की आवश्यकता को स्थानीय स्रोतों से पूरा किया जा सके तथा, तद्नुसार, साधनों को अन्य क्षेत्रों से मंगवाना पड़ता है। यह सामान्यतः ऊँची कीमतों पर संभव होता है। हम कल्पना करते हैं कि एक अभियांत्रिकी फैक्ट्री रुद्रपुर के तराई क्षेत्र में स्थित है। जब उत्पादन का पैमाना लघु था, यह संभव था कि कुछ सामग्री की मांग स्थानीय स्रोत से पूरी हो जाती थी। जैसे-जैसे उत्पादन के पैमाने का विस्तार होता है, एक निश्चित बिंदु के पश्चात् स्थानीय स्रोत से श्रम प्राप्त करना भी कठिन हो जाता है, अन्य क्षेत्रों से मजदूरों को आकर्षित करने के लिए अधिक मजदूरी की पेशकश की जाती है।

2) **प्रबंधन में कठिनाई :** जब उत्पादन का पैमाना बहुत बड़ा हो जाता है, तो उच्च स्तर के प्रबंधकों का कार्य अधिक से अधिक बोझिल हो जाता है तथा कुछ अकुशलता उत्पन्न होने की बाध्यता हो जाती है। कई बार, कंपनी के उच्च प्रबंधकों के पास निर्णय लेने के लिए महत्त्वपूर्ण सूचनाएं नहीं पहुंच पाती हैं। यह विलंब, बदले में, निर्णय प्रक्रिया में विलंब करता है तथा प्रति इकाई लागत में वृद्धि करता है।

3) **तकनीकी कारक :** जब बड़े स्तर पर उत्पादन किया जाता है, अनेक तकनीकी कारणों से प्रति इकाई लागत में वृद्धि होती है। बड़ी तथा जटिल संयंत्रों तथा मशीनरी की स्थापना लागत सामान्यता उच्च होती है। बड़ी फैक्ट्रियों के भवन की बुनियाद भी मज़बूत होनी चाहिए तथा फैक्ट्री को वातानुकूलित, कूलर आदि से सुसज्जित होना भी अनिवार्य हो जाता है। यह सभी कारक प्रति इकाई लागत में वृद्धि करते हैं।

7.8.3 पैमाने की बाह्य मितव्ययताएं

बाह्य मितव्ययताएं की चर्चा सबसे पहले अल्फ्रेड मार्शल द्वारा की गई थी। उनके अनुसार, जब एक फर्म उत्पादन में प्रवेश करती है, उसे अनेक प्रकार की मितव्ययताएं प्राप्त होती हैं जिसके लिए फर्म की अपनी उत्पादन रणनीति, प्रबंधकीय व्यवस्थाएं आदि उत्तरदायी नहीं होतीं। वास्तव में, यह सब मितव्ययताएं फर्म से बाहर की हैं। उदाहरण के लिए, हम कल्पना करते हैं कि एक फर्म एक ऐसे स्थान पर स्थापित की गई है जहां परिवहन, विज्ञापन सुविधाएं आदि उपलब्ध नहीं हैं। यदि फर्म का आकार छोटा रहता है, यह संभव है कि यह सभी सुविधाएं भविष्य में भी स्थानीय तौर पर उपलब्ध न हों। किंतु, यदि फर्म के आकार में काफी वृद्धि होती है, यह सभी सुविधाएं स्वयं फर्म तक आनी प्रारंभ हो जाएंगी। यह सभी, वास्तव में, बाह्य मितव्ययताएं हैं ।

जब एक फर्म उत्पादन के पैमाने में विस्तार करती है, अन्य फर्में भी अनेक प्रकार की मितव्ययताएं प्राप्त करती हैं। उदाहरण के लिए, एक बड़ी फैक्ट्री उत्पादन के विभिन्न कारको को नियमित तौर पर आकर्षित करती है, उसके पड़ोस में स्थापित की गई अनेक अन्य फैक्ट्रियाँ भी, जो शायद स्वयं अपने बल पर इन कारकों को आकर्षित नहीं कर

पातीं, इसका लाभ प्राप्त करती हैं। इन सभी फैक्ट्रियों को यह सभी कारक व्यावहारिक तौर पर उसी कीमत पर प्राप्त होते हैं जिस कीमत पर बड़ी फैक्ट्री ने हासिल किए हैं। बड़े पैमाने पर उत्पादन की बाह्य मितव्ययताएं के कारण, निजी प्रतिफल तथा सामाजिक प्रतिफल के बीच अंतर आ जाता है। जब एक फर्म उत्पादन के पैमाने में विस्तार करती है, अन्य फर्मों के लिए अपनी उत्पादन की लागत कम करना संभव हो जाता है। फिर भी, प्रचलित कीमत तंत्र में ऐसी कोई विधि उपलब्ध नहीं है जिससे एक फर्म अपने पैमाने के विस्तार से अन्य फर्मों को प्राप्त होने वाले लाभ की कीमत वसूल सके।

7.8.4 पैमाने की बाह्य अपमितव्ययताएं

जब उत्पादन के पैमाने में विस्तार होता है, अनेक इस प्रकार की अपमितव्ययताएं भी उत्पन्न हो जाती हैं जिनका स्वयं फर्म पर कोई विशेष बुरा प्रभाव नहीं पड़ता। वास्तव में, इसका भार अन्य फर्मों पर पड़ता है। इस कारण से, यह बाह्य अपमितव्ययताएं कहलाती हैं। एक फर्म की चिमनी से उठने वाला धुआं पर्यावरण को प्रदूषित करता है। जब फर्म छोटे आकार की होती है, प्रदूषण कम होता है तथा आसपास की कॉलोनियों में रहने वाले लोगों पर इसका बुरा प्रभाव भी सीमित होता है। किंतु, यदि फर्म का पैमाना बड़ा है, तो निकलने वाला धुआं अधिक घना होगा तथा आसपास के लोगों के स्वास्थ्य पर पढ़ने वाला प्रभाव भी अधिक हानिकारक होगा। इसी प्रकार, जब फैक्ट्रियों के उत्पादन के पैमाने में वृद्धि होती है, रोजगार भी तेजी से बढ़ता है। इससे उन शहरों में जहां फर्म स्थित है यातायात में जमाव तथा भीड़ की समस्याएं उत्पन्न होती हैं। कृषि में, उत्पादन के पैमाने में वृद्धि से साथ लगे हुए खेतों में भी भू–क्षरण (मृदा अपरदन) तथा उर्वरकता में कमी होती है। ऊपर दिए गए उदाहरण से, यह स्पष्ट है कि बाह्य मितव्ययताएं तथा बाह्य अपमितव्ययताएं, वित्तीय तथा तकनीकी दोनों हो सकती हैं।

बोध प्रश्न 1

1) निम्नलिखित कथनों को **सत्य** तथा **असत्य** के रूप में दर्शाएं :

   i) जब उत्पाद में, उत्पादन के साधनों की मात्रा में वृद्धि की तुलना में अधिक अनुपात में वृद्धि होती है, वह पैमाने के प्रतिफल की अवस्था होती है।

   ii) वह मितव्ययताएं जो फर्म को अन्य फर्मों के कारण प्राप्त होती हैं बाह्य मितव्ययताएं कहलाती हैं ।

   iii) उत्पादन मितव्ययताएं वित्तीय आंतरिक मितव्ययताओं का एक भाग है ।

   iv) रेखीय समरूप उत्पादन फलन की स्थिति में, हमें पैमाने के स्थिर प्रतिफल प्राप्त होते हैं ।

2) पैमाने के बढ़ते प्रतिफल के कारको की चर्चा कीजिए ।

....

....

....

3) बाह्य मितव्ययताओं तथा बाह्य अपमितव्ययताओं से आपका क्या अभिप्राय है?

....

....

....

7.9 सार-संक्षेप

हमने इस इकाई की शुरुआत उत्पादन फलन की अवधारणा की व्याख्या से की। इसके पश्चात् सम-उत्पाद वक्र की परिभाषा तथा तीन प्रकार के सम-उत्पाद वक्रों – (1) उन्नतोदर सम-उत्पाद वक्र; (2) रेखीय सम-उत्पाद वक्र; तथा (3) समकोणीय। सम-उत्पाद वक्र की विशेषताएँ हैं : (i) सम-उत्पाद वक्र ऋणात्मक ढाल वाले होते है; (ii) एक उच्च सम-उत्पाद वक्र एक उच्च उत्पाद स्तर को दर्शाता है; (iii) कोई दो सम-उत्पाद वक्र एक-दूसरे को काटते या छूते नहीं हैं; तथा (iv) सम-उत्पाद वक्र मूल बिंदु की उन्नतोदर होता है। यहां से हमारी चर्चा उत्पादन के आर्थिक क्षेत्र तथा कटक (रिज) रेखाओं की अवधारणा की ओर बढ़ी। अगला भाग साधनों के सर्वोत्तम संयोजन तथा उत्पादक के संतुलन की चर्चा को समर्पित है। इस भाग में, पहले हमने सम-लागत रेखाओं की अवधारणा पर विचार किया तथा उसके पश्चात् इस पर विचार किया कि – (i) एक दी गई लागत पर अधिकतम उत्पादन, तथा (ii) एक दिए गए उत्पाद स्तर पर न्यूनतम लागत। इस इकाई के अंतिम खंड में एक फर्म के विस्तार पथ पर चर्चा दोनों– दीर्घकाल तथा अल्पकाल के अंतर्गत की गई है।

इस इकाई में, पैमाने के प्रतिफल की अवधारणा की व्याख्या की गई। जैसा कि आरंभ में नोट किया गया था, यह अवधारणा उत्पादन की प्रवृति से संबंधित है जब उत्पादन के साधनों का अनुपात समान रहता है तो यह तीन संभावनाओं को जन्म देता है – पैमाने के बढ़ते प्रतिफल, पैमाने के स्थिर प्रतिफल तथा पैमाने के घटते प्रतिफल। इन सभी तीनों संभावनाओं की चर्चा करने के पश्चात, हमने अपना ध्यान पैमाने की मितव्ययताओं तथा अपमितव्ययताओं की ओर अंतरित किया है। पैमाने की मितव्ययताओं को, आगे दो भागों में बांटा गया– पैमाने की आंतरिक मितव्ययताएं तथा पैमाने की बाह्य मितव्ययताएं।

7.10 संदर्भ ग्रंथादि

1) *Robert S Pindyck, Daniel L. Rubinfld* and *Prem L Mehta*, Microeconomics (Pearson Education, Seventh Edition, 2009), Chapter 5, Section 5.1 and Section 5.3 & 5.4

2) *Dominick Salvatore*, Principles of Microeconomics (Oxford University Press, Fifth Edition, 2010), Chapter 7, Section 7.1, Section 7.3 and Section 7.4. & 7.5

3) *A.Koutsoyiannis*, Modern Microeconomics (The Macmillan Ltd., Second edition, 1982). Chapter 3.

4) *John P. Gould* and *Edward P. Lazear*, Microeconomic Theory (All India Traveller Bookseller, Sixth edition, 1996), Chapter 7 & Chapter 8, Section 8.6.

7.11 बोध प्रश्नों के उत्तर एवं संकेत

बोध प्रश्न 1

1) (i) असत्य (ii) असत्य (iii) सत्य (iv) सत्य

2) भाग 7.3 का उपभाग 7.3.1 तथा भाग 7.4 देखें।

3) भाग 7.3 का उपभाग 7.3.2 देखें।

बोध प्रश्न 2

1) (i) असत्य (ii) सत्य (iii) सत्य (iv) सत्य (v) सत्य (vi) सत्य

2) भाग 7.6 देखें।

3) (i) सम.लागत रेखा का ढाल $-P_L/P_K = -2$ है तथा समीकरण 160=10K+20L या 16 = K + 2L या K = 16 – 2L है।

4) भाग 7.6 देखें।

5) भाग 7.6 का उपभाग 7.6.3 देखें।

6) भाग 8.7 देखें।

बोध प्रश्न 3

1) (i) सत्य (ii) सत्य (iii) असत्य (iv) सत्य

2) भाग 9.2 का उपभाग 9.2.1 देखें।

3) भाग 9.3 का उपभाग 9.3.3 तथा 9.3.4 देखें।

ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY

इकाई 8 लागत फलन

संरचना

8.0 उद्देश्य

8.1 विषय प्रवेश

8.2 लागत की अवधारणा

8.2.1 निजी लागत तथा सामाजिक लागत

8.2.2 मौद्रिक लागत : स्पष्ट लागत तथा अंतर्निहित लागत

8.2.3 वास्तविक लागत

8.2.4 डूबत लागत तथा वृद्धिशील लागत

8.2.5 आर्थिक लागत तथा लेखांकन लागत

8.2.6 ऐतिहासिक लागत तथा प्रतिस्थापन लागत

8.3 लागत फलन : अल्पकालिक तथा दीर्घकालिक

8.3.1 लागत फलन तथा समय का प्रभाव

8.3.2 दीर्घकालिक लागत फलन

8.3.3 अल्पकालीन लागत फलन

8.4 अल्पकाल में लागत का सिद्धांत

8.4.1 स्थिर लागत

8.4.2 परिवर्ती लागत

8.4.3 कुल स्थिर लागत

8.4.4 कुल परिवर्ती लागत

8.4.5 कुल लागत

8.5 अल्पकालिक लागत वक्र

8.5.1 औसत स्थिर लागत

8.5.2 औसत परिवर्ती लागत

8.5.3 औसत कुल लागत

8.5.4 सीमांत लागत

8.5.5 सीमांत लागत तथा औसत लागत के बीच संबंध

8.6 दीर्घकालिक लागत वक्र

8.6.1 दीर्घकाल आर्थिक कुशलता

8.6.2 दीर्घकाल औसत लागत वक्र

8.6.3 दीर्घकाल सीमांत लागत वक्र

8.6.4 दीर्घकाल सीमांत लागत तथा अल्पकाल सीमांत लागत के बीच संबंध

8.7 सार-संक्षेप

8.8 संदर्भ ग्रंथादि

8.9 बोध प्रश्नों के उत्तर अथवा संकेत

8.0 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात, आप सक्षम होंगे :

- लागत की विभिन्न अवधारणाओं जैसे, निजी लागत, सामाजिक लागत, मौद्रिक लागत, डूबत लागत, आर्थिक लागत, लेखांकन लागत आदि की अवधारणा को बताने में;
- अल्पकालिक लागत फलन तथा दीर्घकालिक लागत फलन के बीच अंतर करने में;
- स्थिर लागत तथा परिवर्ती लागत के बीच अंतर तथा कुल लागत वक्र की प्रकृति को जानने में;
- औसत स्थिर लागत, औसत परिवर्ती लागत, औसत कुल लागत तथा सीमांत लागत की अवधारणा तथा इनके वक्रों की प्रकृति की व्याख्या करने में;
- सीमांत लागत वक्र तथा औसत लागत वक्र के बीच संबंध की चर्चा करने में;
- अल्पकालिक तथा दीर्घकालिक लागत वक्र में भेद स्पष्ट करने में; और
- दीर्घकालिक सीमांत लागत तथा अल्पकालिक सीमांत लागत के बीच संबंध का वर्णन करने में।

8.1 विषय प्रवेश

एक फर्म का एक वस्तु के उत्पादन संबंधी निर्णय, दो कारकों पर निर्भर करता है: पहला, वस्तु की मांग, तथा दूसरा, वस्तु के उत्पादन की लागत। इस प्रकार, उत्पादन की लागत की अवधारणा, कीमत सिद्धांत को समझने का आधार है तथा इसके लिए एक विस्तृत चर्चा की आवश्यकता है। एक कीमत स्वीकारक फर्म अपने लाभ को अधिकतम करना चाहती है, वह ऐसा केवल अपनी लागतों को न्यूनतम करके कर सकती हैं। निःसंदेह, एक फर्म की रुचि निजी लागतों को कम करने में होती है। सामाजिक लागत की अवधारणा, जिसका संदर्भ, अधिकतर सामाजिक कल्याण के संदर्भ में दिया जाता है, फर्म के सिद्धांत से किसी प्रकार संबंधित नहीं है। यद्यपि, यह आवश्यक है कि निजी लागत तथा सामाजिक लागत की अवधारणा के अंतर को समझा जाए। आर्थिक विश्लेषण में, हम अधिकतर, मौद्रिक लागत तथा अवसर लागत में अंतर करते हैं। एक विश्लेषक की दृष्टि में, दोनों अवधारणाएँ परस्पर संबंधित हैं तथा इन्हें ध्यानपूर्वक समझना आवश्यक है। मौद्रिक लागत की अवधारणा की व्याख्या, एक लेखापाल या अर्थशास्त्री के दृष्टिकोण से की जा सकती है। दोनों दृष्टिकोण अंतर्निहित लागतों के व्यवहार के कारण अलग-अलग हो जाते हैं।

लागत के सिद्धांत में, इन अवधारणाओं को समझने के पश्चात, हमें लागत की प्रकृति का अल्पकाल तथा दीर्घकाल में विश्लेषण करना होगा। अल्पकाल में कुछ आगत स्थिर तथा कुछ आगत परिवर्ती होते हैं। अतः हमें स्थिर लागत तथा परिवर्ती लागत का अंतर स्पष्ट करना होगा। क्योंकि दीर्घकाल में सभी आगतों की मात्रा में परिवर्तन किया जा सकता है, इसीलिए वहां सभी लागतों पर एक साथ विचार किया जाता है। अंत में, लागत का सिद्धांत, यह व्याख्या करने का प्रयास करता है कि कैसे उत्पादन के आकार में परिवर्तन होने के परिणामस्वरूप लागत में परिवर्तन होता है। पिछली दो इकाइयों में हमने उत्पादन के सिद्धांत की विस्तार से चर्चा की थी। यह चर्चा हमें यह समझने में मदद करेगी कि लागत में परिवर्तन, खासतौर पर इस बात पर निर्भर करता है कि कैसे आगतों की मात्रा में परिवर्तन से उत्पादन में परिवर्तन होता है।

8.2 लागत की अवधारणा

8.2.1 निजी लागत तथा सामाजिक लागत

व्यष्टि अर्थशास्त्र सिद्धांत में, निजी लागत तथा सामाजिक लागत, दोनों अवधारणाओं का प्रयोग किया जाता है। एक फर्म, लाभ अधिकतम करने के उद्देश्य को प्राप्त करने के लिए, पूरी तरह निजी लागतों पर ध्यान देती है। उसके निर्णय लेने की प्रक्रिया उन सभी लागतों को अनदेखा कर देती है, जो उत्पादन करते समय दूसरों पर डाली जा सकती हैं। हालांकि, क्षेम के अध्ययन में, एक फर्म की अंतर्निहित लागतों के साथ, ऐसी सभी लागतों को लेखांकित किया जाता है जो एक फर्म के संकीर्ण आर्थिक चिंतन के लिए बाहरी (बाह्य लागतें) हैं।

निजी लागतें : प्रत्येक फर्म को एक वस्तु के उत्पादन के लिए विभिन्न आगतों की आवश्यकता होती है। इन सभी आगतों पर अधिकार पाने के लिए फर्म को प्रत्येक आगत के लिए कुछ कीमत का भुगतान करना होता है। सामान्य बोलचाल में, भुगतान की गई इस राशि को लागत कहते हैं। अर्थशास्त्री, हालांकि, निजी लागत में न केवल उत्पादक द्वारा बाजार से उत्पादन के साधनों (या आगतों) को खरीदने (या किराए पर लेने) के लिए व्यय को शामिल करते हैं, अपितु उन सभी अंतर्निहित लागतों को भी शामिल करते हैं जो उत्पादक द्वारा स्वयं प्रदान की गई सेवाओं की लागत आंकी जाती है। किसी उत्पाद की निजी लागत को इस प्रकार परिभाषित किया जा सकता है कि यह उत्पादन में प्रयुक्त सभी उत्पादक सेवाओं का क्रय मूल्य या आकलित मूल्य है तथा इनको प्राप्त करने के लिए फर्म द्वारा किए गए कुल मौद्रिक त्याग के बराबर है। सामान्यतः, अर्थशास्त्री निम्नलिखित व्यय को लागत में शामिल करते हैं : (i) कच्चे माल की लागत; (ii) श्रमिकों की मजदूरी; (iii) पूँजीगत ऋण पर ब्याज का भुगतान, (iv) भूमि तथा भवन का किराया, (v) मशीनों की मरम्मत की लागत तथा मूल्य ह्रास; (vi) सरकार तथा स्थानीय निकायों को कर का भुगतान; (vii) उत्पादक द्वारा किए गए कार्यों के लिए स्वयं को अंतर्निहित मजदूरी का भुगतान; (viii) उत्पादक द्वारा स्वयं निवेश की गई पूँजी पर अंतर्निहित ब्याज का भुगतान; (ix) उत्पादक द्वारा स्वयं स्वामित्व भूमि तथा भवन का अंतर्निहित किराया; तथा (x) फर्म का सामान्य लाभ।

यह दर्शाता है कि तीन प्रकार का व्यय निजी लागत में शामिल किया जाता है : (i) उत्पादन प्रक्रिया में लगाए गए उत्पादन के साधनों के क्रय की कीमत; (ii) उत्पादक द्वारा स्वयं प्रदान किए गए संसाधनों की अंतर्निहित कीमत; तथा (iii) सामान्य लाभ।

सामाजिक लागतें : सामाजिक लागतें, निजी लागतों से दो कारणों के आधार पर अलग हैं:

पहला, बाह्यताओं को निजी लागत में शामिल नहीं किया जाता है। उदाहरण के लिए, आवासीय क्षेत्र में स्थित एक कारखाना वातावरण को प्रदूषित करके उस आवासीय कॉलोनी में रहने वाले निवासियों के सामने विभिन्न बीमारियों के खतरे खड़ा करता है तथा उनकी चिकित्सा व्यय को बढ़ाता है। यद्यपि समाज की दृष्टि से ये लागतें काफी महत्त्वपूर्ण हैं। यह फर्म द्वारा कभी भी लागत के अंश के तौर पर नहीं समझी जातीं।

दूसरा, वस्तु का बाज़ार मूल्य उसके सामाजिक मूल्य को नहीं दर्शाता है तथा इस प्रकार निजी लागत तथा सामाजिक लागत के बीच में अंतर पाया जाता है। सरकारी करों का आरोपण, अनुदान और अनेक प्रकार के नियंत्रण मुक्त बाज़ार कीमतों को प्रभावित करते हैं। आगे, उत्पादन के साधनों की कीमत संभवतः उपयोग किए गए साधनों की अवसर लागत को बढ़ा-चढ़ाकर या कम करके प्रस्तुत कर सकती है। बहुत अधिक जनसंख्या वाले देशों में जहां छिपी हुई बेरोजगारी का फैलाव कृषि क्षेत्र में बहुत अधिक पाया जाता है, औद्योगिक मज़दूरी अधिकतर उस अवसर लागत से अधिक पाई जाती है जो श्रम को कृषि क्षेत्र से प्राप्त होती है। सामाजिक लागत की गणना करने में,

वस्तुओं तथा उत्पादन के साधनों की समायोजित बाज़ार कीमतें प्रयोग की जाती हैं। यहां उत्पादन के साधनों की समायोजित कीमतें छाया कीमतें भी कहलाती हैं, वस्तुओं की समायोजित कीमतें सामाजिक कीमतें कहलाती हैं।

8.2.2 मौद्रिक लागत : स्पष्ट लागत तथा अंतर्निहित लागत

अवसर लागत की अवधारणा की तुलना में मौद्रिक लागत की अवधारणा सरल है।

किसी वस्तु के उत्पादन की मौद्रिक लागत को, उस उत्पाद को प्राप्त करने के लिए किए गए कुल मौद्रिक राशि के त्याग के बराबर माना जाता है।

इस प्रकार, लागत, त्यागे गए विकल्प नहीं बल्कि मौद्रिक भुगतान हैं। मौद्रिक लागत का यह निरूपण तुलनात्मक रूप से संकीर्ण होता है तथा यह लेखांकन के उद्देश्य से प्रयोग किया जाता है। अर्थशास्त्रियों के दृष्टिकोण से, लागत की यह अवधारणा प्रासंगिक नहीं है क्योंकि अर्थशास्त्री यह अध्ययन करना चाहते हैं कि लागत कैसे उत्पाद के चयन, रोज़गार के निर्णय आदि को प्रभावित करती है। अतः लागत में, स्पष्ट मौद्रिक व्यय के अलावा, उत्पादक द्वारा स्वयं प्रदान की गई आगतों का अंतर्निहित मूल्य भी शामिल होना चाहिए। अतः लागतों को अंतर्निहित लागतों तथा स्पष्ट लागतों में वर्गीकृत किया जा सकता है। स्पष्ट लागतें, एक फर्म तथा अन्य पक्षों के बीच लेन-देन के कारण उत्पन्न होती है, जिसमें फर्म उत्पादन करने के लिए आगतों या आगतों की सेवाओं का क्रय करती हैं। ये लागतें सामान्यतः वे लागतें होती हैं जिन्हें लेखांकन विवरण में दर्शाया जाता है तथा इसमें मज़दूरी भुगतान, कच्चे माल की लागत, ऋण पर ब्याज, बीमे का भुगतान, बिजली का भुगतान, आदि शामिल होता है। अंतर्निहित लागतें, वे लागतें होती हैं जो फर्म द्वारा स्वयं स्वामित्व वाले संसाधनों के प्रयोग से संबंधित होती हैं क्योंकि यदि इन संसाधनों को कहीं और लगाया जाता तो इन्हें प्रतिफल प्राप्त होता। इनका आकलित मूल्य अंतर्निहित लागतों में शामिल होता है यद्यपि अंतर्निहित लागतों की गणना कठिन होती है। किंतु अर्थशास्त्री फिर भी जोर देकर कहते हैं कि अंतर्निहित लागतों को फर्म की क्रियाओं के विश्लेषण के दौरान ध्यान में रखना चाहिए ।

8.2.3 वास्तविक लागत

वास्तविक लागत की अवधारणा का विकास अल्फ्रेड मार्शल द्वारा किया गया था। उनके विचार में, एक श्रमिक को, उत्पादन के उद्देश्य से अपनी सेवाएं प्रदान करने में असुविधा को सहना पड़ता है। इसी प्रकार, एक व्यक्ति को कुछ त्याग करना पड़ता है जब वह अपनी आय को बचाता है तथा उसे निवेशक को उधार देता है जो इसे उत्पादन करने में प्रयोग करता है। इन सभी सुविधाओं तथा त्याग की प्रकृति उत्पादन की वास्तविक लागत होती है। मार्शल के शब्दों में, ''श्रम की सभी प्रकार के श्रम की थकान जो प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से उत्पादन से जुड़ी हैं; के साथ, उत्पादन में प्रयोग पूँजी को बचाने में लगने वाला इंतजार या अनुपयोग; ये सभी प्रयास तथा त्याग एक साथ मिलकर वस्तु के उत्पादन की वास्तविक लागतें कहलाती हैं।''

वास्तविक लागत की अवधारणा तो आत्मचेतना पर आधारित रहती है तथा उत्पादन लागत के सटीक माप के लिए प्रयोग नहीं की जा सकती। यही कारण है कि आधुनिक अर्थशास्त्री कीमत सिद्धांत के संदर्भ में इसे महत्त्व नहीं देते। वे मानते हैं कि अधिकतर श्रम कठोर कार्य में लगा होता है तथा अवश्य ही ना खुश होता है। इसलिए, इसकी एक भारी वास्तविक लागत होती है। इसके विपरीत, सरल तथा कम कठोर कार्य की वास्तविक लागत सामान्यता कम होती है। लेकिन यह तथ्य, मुक्त अर्थव्यवस्था में कीमत निर्धारण के दृष्टिकोण से किसी भी प्रकार संबंधित नहीं है। इसके अतिरिक्त, आधुनिक अर्थशास्त्र के अनुसार, बचत में किसी भी प्रकार का त्याग शामिल नहीं है। अतः ये अर्थशास्त्री वास्तविक लागत की अवधारणा को अनुचित मानते हैं।

8.2.4 डूबत लागत तथा वृद्धिशील लागत

अर्थशास्त्र तथा व्यापार निर्णयन में, डूबत लागत वह लागत है, जो व्यय की जा चुकी है तथा जिसे वापस प्राप्त नहीं किया जा सकता। डूबत लागतें (जिन्हें पूर्व प्रभावी लागतें भी कहते हैं) कभी-कभी भावी लागतों के विपरीत होती हैं, जो भविष्य की लागतें होती हैं जो कोई कार्य किए जाने पर उठाई जाती हैं, या बदल जाती हैं। परंपरागत व्यष्टि अर्थशास्त्र में, केवल भावी (भविष्य) लागतें निर्णयन से संबंधित होती हैं, क्योंकि डूबत लागतें पहले ही व्यय की जा चुकी हैं (तथा इन्हें वापस प्राप्त नहीं किया जा सकता। इसलिए ये एक विवेकशील निर्णय लेने वाले के चयन को किसी भी तरह प्रभावित नहीं करती हैं)।

उत्पादन या किसी अन्य क्रिया में वृद्धि के कारण कुल लागत में होने वाली वृद्धि को अतिरिक्त लागत कहते हैं। उदाहरणार्थ, यदि एक कंपनी में कार्य के घंटों में 7000 से 8000 तक की वृद्धि होने के कारण कुल लागत रु. 5.6 लाख से बढ़कर रु. 6.0 लाख हो जाती है, तब 1000 कार्य के घंटों की अतिरिक्त लागत रु. 40000 है ।

8.2.5 आर्थिक लागत तथा लेखांकन लागत

अर्थशास्त्री तथा लेखापाल लागत को अलग-अलग दृष्टिकोण से देखते हैं। लेखापाल फर्म के वित्तीय विवरण से संबद्ध होते हैं तथा फर्म के वित्त को पूर्वभावी दृष्टि से देखते हैं, क्योंकि, उन्हें फर्म के पिछले प्रदर्शन के मूल्यांकन के लिए फर्म की संपत्ति तथा देयताओं का हिसाब रखना पड़ता है। लेखांकन लागत में, पूँजीगत उपकरणों पर कर प्राधिकरण द्वारा स्वीकृत दरों पर मूल्य ह्रास पर व्यय शामिल होता है।

अर्थशास्त्री, दूसरी तरफ, भविष्य में होने वाली लागत के प्रति अधिक चिंतित होते हैं, कि कैसे एक फर्म अपने संसाधनों को पुनर्व्यवस्थित करके लागत को कम करती है तथा अपने लाभ को बढ़ाती है। इस प्रकार, यह आगे की ओर देखने वाले दृष्टिकोण को अपनाते हैं तथा इसलिए अवश्य ही अवसर लागत के लिए चिंतित होते हैं।

जैसे पहले कहा गया है, अस्पष्ट लागत तथा स्पष्ट लागत के प्रति व्यवहार में भी अंतर होता है अर्थशास्त्री तथा लेखापाल दोनों स्पष्ट लागतों (जैसे मजदूरी तथा वेतन का भुगतान, कच्चे माल की लागत, संपत्ति का किराया आदि) पर विचार करते हैं, क्योंकि इसमें एक फर्म द्वारा अन्य फर्म या व्यक्तियों, जिनसे वह व्यापार करते हैं, प्रत्यक्ष भुगतान शामिल होता है। किंतु, अर्थशास्त्री तो अस्पष्ट या अंतर्निहित लागतों का संज्ञान लेते हैं, पर लेखापाल इन्हें नजरअंदाज कर देते हैं। उदाहरण के लिए, एक खुदरा भंडार के मालिक पर विचार कीजिए, जो अपने खुदरा भंडार का स्वयं प्रबंधन करता है, लेकिन स्वयं का वेतन का कोई भुगतान नहीं करता (क्योंकि कोई मौद्रिक लेन-देन नहीं हुआ है)। लेखापाल इसे लेखांकन लागत में शामिल नहीं करता, हालांकि, अर्थशास्त्री इस अंतर्निहित लागत को, कुल लागत में शामिल करते हैं, क्योंकि यदि खुदरा भंडार का स्वामी, किसी अन्य स्थान पर कार्य कर रहा होता तो उसे प्रतिस्पर्धात्मक वेतन की प्राप्ति होती (इस प्रकार, खुदरा भंडार स्वामी के कार्य की अवसर लागत उसकी अंतर्निहित लागत होगी)।

मूल्यह्रास के साथ किए जाने वाला व्यवहार भी अलग होता है। व्यापार की भविष्य की लाभदायकता का अनुमान लगाते समय, एक अर्थशास्त्री मशीनरी तथा प्लांट की पूँजीगत लागत के विषय में भी चिंतित रहता है। इसमें केवल मशीनरी को खरीदने तथा चलाने की स्पष्ट लागत ही शामिल नहीं होती, अपितु सामान्य टूट-फूट की लागत भी शामिल होती है। वहीं दूसरी तरफ, लेखापाल विभिन्न परिसंपत्तियों पर, कर कानूनों के अंतर्गत स्वीकृत मूल्यह्रास दरों को, लागत तथा लाभ गणना में प्रयोग करते हैं। यह जरूरी नहीं है कि ये मूल्यह्रास दरें उपकरण की वास्तविक टूट-फूट को दर्शाती हों, जो प्रत्येक परिसंपत्ति में भिन्न हो सकती हैं।

ऊपर की गई चर्चा दर्शाती है कि अर्थशास्त्रियों तथा लेखापाल द्वारा प्रयोग की गई लागत की गणना की विधियों में कुछ महत्त्वपूर्ण अंतर होते हैं और तद्नुसार, लाभ की गणना भी भिन्न होती है। उदाहरण के लिए, माना एक खुदरा भंडार के स्वामी ने रु. 1,00,000 खुदरा भंडार तथा वस्तु सूची में निवेश किए हैं। उसकी बिक्री से प्राप्त मासिक संप्राप्ति रु. 260000 है। बेची गई वस्तुओं की लागत, काम पर लगाए मज़दूरों के वेतन तथा उपकरणों एवं भवन के मूल्यह्रास को घटाने के उपरांत, भंडार के स्वामी का लेखा लाभ रु. 25000 है (तालिका 8.1 देखें)।

तालिका 8.1 : खुदरा भंडार स्वामी का आय विवरण लेखा

बिक्री		रु. 2,60,000
विक्रय की गई वस्तुओं की लागत	रु. 1,80,000	
वेतन	रु. 30,000	
मूल्यह्रास व्यय	रु. 25,000	रु. 2,35,000
लेखा लाभ		रु. 25,000

तालिका 8.2 में हम इसी खुदरा भंडार के आर्थिक विवरण पर विचार करेंगे। विक्रय की गई वस्तुओं की लागत और वेतन समान रहता है। मान लीजिए, वर्तमान वर्ष में उपकरणों तथा भवन का बाज़ार मूल्य पिछले वर्ष की तुलना में रु. 25000 घट गया है तथा मूल्यह्रास में शामिल कर लिया गया है। यह संसाधनों की अवसर लागत को दर्शाता है। इस प्रकार तालिका 8.1 में मूल्यह्रास में रु. 25000 लिया गया है हालांकि अर्थशास्त्री कुल लागत में अंतर्निहित लागत से संबंधित दो मदों को जोड़ेंगे। मान लीजिए, हमारा प्रबंधक किसी अन्य बड़ी दुकान में प्रबंधक का कार्य करता तो उसे रु. 25000 प्रतिमाह की आय प्राप्त हो सकती है। यह उसके वेतन की सर्वोत्तम अवसर लागत है। अर्थशास्त्री उत्पादन की लागत में स्वामी प्रबंधक का आकलित वेतन रु. 25000 जोड़ेगा। इसी प्रकार, स्वामी प्रबंधक की खुदरा भंडार तथा वस्तु सूची में रु. 100000 का अंश निवेश है जिसे वह सरलता से कहीं और निवेश कर सकता था। हम मान लेते हैं कि वह राशि पर 10% दर से ब्याज़ प्राप्त करता, यदि वह कहीं और निवेश करता। अतः उक्त राशि पर आकलित ब्याज़ की लागत रु. 10000 पर होती। अतः जैसा हम तालिका 8.2 में देख सकते हैं, कुल आर्थिक लागतें या उत्पादन प्रक्रिया में इस्तेमाल किए गए सभी संसाधनों की अवसर लागत का योग रु. 270000 होता है। यह स्वामी प्रबंधक को रु. 11000 की आर्थिक हानि दर्शाता है जबकि इसकी तुलना में तालिका 8.1 रु. 25000 का लेखा लाभ दर्शा रही है।

तालिका 8.2 : मुद्रा भंडार स्वामी के लाभ का आर्थिक विवरण

	रुपये	रुपये
बिक्री		2,60,000
बिक्री की गई वस्तु की लागत	1,80,000	
वेतन	30,000	
मूल्यह्रास व्यय	25,000	
स्वामी प्रबंधक को आरोपित वेतन	25,000	
अंश निवेश पर आरोपित ब्याज़ लागत	10,000	
आर्थिक लाभ		–10,000

यहां बताए गए अर्थशास्त्री और लेखापाल द्वारा की गई लाभ की गणनाओं में अंतर के अतिरिक्त, पर यह ध्यान देना भी महत्त्वपूर्ण होगा कि अर्थशास्त्री के लिए, लाभ तथा हानि महत्त्वपूर्ण शक्तियां हैं, जबकि व्यापार लेखांकन केवल इन तक सीमित नहीं है। व्यापार खातों में तुलन पत्र जो किसी एक निश्चित तिथि को फर्म की वित्तीय चित्र को दर्शाती है भी शामिल होती है। विवरण यह ब्यौरा रखता है कि एक फर्म का दिए गए समय बिंदु पर कितना मूल्य है। तुलन पत्र में एक तरफ 'परिसंपत्तियों' का ब्यौरा लिखा जाता है तथा दूसरी तरफ 'देयताओं' और 'निवल मूल्य' का ब्यौरा लिखा जाता है। एक तुलन पत्र सदैव संतुलन में होता है, क्योंकि निवल मूल्य को, परिसंपत्तियों तथा देयताओं के अंतर के रूप में परिभाषित किया जाता है।

व्यापार लेखांकन की अवधारणा का सारांश निम्न प्रकार है :

1) **आय विवरण, एक वर्ष या एक लेखांकन अवधि के दौरान बिक्री, लागत तथा संप्राप्ति के प्रवाह को दर्शाता है। यह एक विशिष्ट समय अवधि के दौरान फर्म में मुद्रा के अंतः प्रवाह तथा बाह्य प्रवाह को मापता है।**

2) **तुलन पत्र एक फर्म की तत्कालीन वित्तीय चित्र या आशु चित्र को दर्शाता है। यह झील में पानी की मात्रा को मापने के समान है। इसकी मुख्य मदें परिसंपत्तियां, देयताएं तथा निवल मूल्य हैं।**

8.2.6 ऐतिहासिक लागत तथा प्रतिस्थापन लागत

ऐतिहासिक लागत वह लागत है जो एक परिसंपत्ति को क्रय करते समय वास्तविक रूप से व्यय की गई थी। इसकी तुलना में, प्रतिस्थापन लागत वह लागत है, जो इस परिसंपत्ति का प्रतिस्थापन करने में व्यय की जाएगी (अर्थात्, प्रतिस्थापन लागत, समान प्रकार की नई परिसंपत्ति की वर्तमान लागत होती है)।

इन दोनों लागतों में अंतर समयावधि के बीतने के कारण कीमत में होने वाले परिवर्तन के कारण होता है। स्वाभाविक रूप से, यदि समय बीतने पर भी कीमत अपरिवर्तित रहती तो दोनों प्रकार की लागत भी समान रहती। लेकिन ऐसा कभी कभार होता है। अतः, एक परिसंपत्ति की ऐतिहासिक लागत तथा प्रतिस्थापन लागत सदैव भिन्न होती हैं। यदि उस समयावधि के दौरान परिसंपत्ति की कीमत में वृद्धि होती है, तो प्रतिस्थापन लागत, ऐतिहासिक लागत से अधिक होती है। वहीं दूसरी तरफ, यदि उस समय अवधि में परिसंपत्ति की कीमत घटती है, तब प्रतिस्थापन लागत, ऐतिहासिक लागत से कम होती है।

क्योंकि, विभिन्न कर कानूनों की आवश्यकता को पूरा करने के लिए तथा अंशधारकों को वित्तीय रिपोर्ट प्रस्तुत करने के कानूनों के अंतर्गत, लेखापाल सामान्यतः उत्पादन प्रक्रिया में प्रयोग किए गए संसाधनों के भुगतान के रूप में, अनेक प्रकार की लागतों को, वित्तीय खातों की सुगमता के लिए, वास्तविक या ऐतिहासिक लागत के रूप में प्रस्तुत करता है। हालांकि अर्थशास्त्री तथा लेखापाल दोनों इस बात पर सहमत हैं कि निर्णय लेने की प्रक्रिया में, ऐतिहासिक लागत उतनी महत्त्वपूर्ण नहीं होती, जितनी प्रतिस्थापन लागत। यह इस कारण होता है कि सभी निर्णय लेने के उद्देश्य से, वर्तमान लागत (या प्रतिस्थापन लागत) ज्यादा महत्त्वपूर्ण होती है ना कि वह लागत, जो कुछ साल पहले परिसंपदा को क्रय करते समय की जा चुकी है।

बोध प्रश्न 1

1) निम्न कथनों को सत्य या असत्य के रूप में दर्शाएं :

   i) बाह्यताएं निजी लागत का भाग नहीं होतीं। ( )

ii) अंतर्निहित लागतें वे लागतें हैं जो फर्म के स्वयं के संसाधनों के प्रयोग से संबंधित हैं। ( )

iii) पूर्वप्रभावी लागतें निर्णय लेने से संबद्ध हैं। ( )

iv) लेखापाल एक फर्म के वित्त को पूर्वप्रभावी दृष्टि से देखते हैं। ( )

v) अर्थशास्त्री अवसर लागत के प्रति अधिक चिंतित होते हैं। ( )

vi) ऐतिहासिक लागत एक समान प्रकार की नई परिसंपत्ति की वर्तमान लागत है। ( )

2) स्पष्ट लागतों तथा अंतर्निहित लागतों के बीच अंतर को समझाइए।

....

....

....

3) निजी लागत तथा सामाजिक लागत के बीच अंतर कीजिए।

....

....

....

4) डूबत लागत तथा अतिरिक्त लागत के बीच क्या अंतर है?

....

....

....

5) आर्थिक लागत तथा लेखांकन लागत के बीच अंतर को समझाइए।

....

....

....

8.3 लागत फलन : अल्पकालिक तथा दीर्घकालिक

उत्पादन तथा लागत के बीच संबंध को लागत फलन के रूप में जाना जाता है।

एक फर्म के लागत फलन का निर्धारण करने में दो मूल तत्व होते हैं। पहला, फर्म का उत्पादन; तथा दूसरा, प्रयोग किए गए साधनों के लिए फर्म द्वारा भुगतान की गई कीमत।

आमतौर पर, उत्पाद फलन अनेक प्रकार के हो सकते हैं। इसी समय, उत्पादन का एक साधन परिवर्ती होता है तथा अन्य साधन स्थिर। यह भी संभव है कि कुछ साधन परिवर्ती हों। इस कारण से, लागत फलन भी अनेक प्रकार के हो सकते हैं। अर्थशास्त्र में, कीमत सिद्धांत के अंतर्गत, सामान्यतः दो प्रकार के लागत फलन माने गए हैं :

1) अल्पकालिक लागत फलन, तथा

2) दीर्घकालिक लागत फलन

लागत फलनों की, लागत वक्र के रूप में, रेखाचित्र के द्वारा भी व्याख्या की जा सकती है

8.3.1 लागत फलन तथा समय का प्रभाव

लागत के सिद्धांत को समझने के लिए, यह आवश्यक है कि अल्पकाल तथा दीर्घकाल के अर्थ को स्पष्ट कर लिया जाए। सामान्य प्रयोग में, इन शब्दों को सप्ताह, महीने या वर्षों के लिए प्रयोग किया जा सकता है किंतु अर्थशास्त्री के लिए ये उत्पादन की स्थिति को दर्शाते हैं तथा इनका कैलेंडर वर्ष से कोई संबंध नहीं होता है। इसके बावजूद, जब भी हम अल्पकाल या दीर्घकाल शब्दों की चर्चा करते हैं, समय की अवधारणा प्रकट हो ही जाती है।

सामान्यतः अर्थशास्त्री उस समय अवधि को अल्पकाल मानते हैं जिसमें उत्पादन के कुछ साधन (या कम से कम एक साधन) स्थिर होते हैं तथा फर्म उत्पादन के स्तर में वृद्धि करने के लिए, केवल उत्पादन के परिवर्ती साधनों पर निर्भर करती है। यदि फर्म उत्पादन में परिवर्ती साधनों को बिल्कुल नहीं लगाती, तो अल्पकाल में उत्पादन शून्य होता है। हालांकि, उत्पादन की अधिकतम मात्रा, जिसे फर्म उत्पादित कर सकती है, उत्पादन के स्थिर साधनों की मात्रा पर निर्भर करती है। दीर्घकाल में, उत्पादन के सभी साधन परिवर्ती होते हैं, तथा उत्पादन की मात्रा को किसी भी सीमा तक बढ़ाया जा सकता है। उदाहरणार्थ, एक निर्माण उद्योग में, संयंत्र, मशीनरी (उपकरण), फैक्ट्री का भवन आदि अल्पकाल में स्थिर संसाधन है जबकि कच्चा माल, श्रम, बिजली आदि परिवर्ती साधन है। अतः इस अवधि में उत्पादन की मात्रा में वृद्धि करने के लिए, यह आवश्यक हो जाता है की स्थिर संसाधनों के साथ परिवर्ती संसाधनों की प्रयोग की जा रही मात्रा को बढ़ाया जाए। निःसंदेह, उत्पादन की अधिकतम मात्रा, जिसे इस अवधि में प्राप्त किया जा सकता है, काफी हद तक उत्पादन के स्थिर साधनों की कुल मात्रा पर निर्भर करती है ।

8.3.2 दीर्घकालिक लागत फलन

दीर्घकाल में, कुल लागत फलन एक बहुचर फलन होता है, जिसका अर्थ है, कुल लागत का निर्धारण अनेक कारकों से होता है। दीर्घकाल लागत फलन को निम्न प्रकार लिखा जा सकता है :

$$C = f(Q, T, P_f)$$

जहां, C = उत्पादन की कुल लागत

Q = उत्पाद की मात्रा

T = तकनीक (प्रौद्योगिकी)

P_f = संबंधित उत्पादन के साधनों की कीमतें

रेखाचित्र द्वारा, दीर्घकाल लागत फलन को द्वि-आयामी $C=f(Q)$, रेखाचित्र द्वारा दर्शाया जाता है, (बाकी सब साधनों का प्रयोग पूर्ववत् रहने पर)। इस मान्यता के साथ कि तकनीक तथा संबंधित उत्पादन के साधनों की कीमतें समान रहती हैं, दीर्घकाल लागत फलन को इस प्रकार लिखा जा सकता है :

$$C= f(Q, \bar{T}, \bar{P}_f) \text{ अथवा } C=f(Q)$$

हालांकि, यह आवश्यक नहीं कि तकनीक तथा साधनों की कीमत समान ही रहे। जब यह कारक परिवर्तित होते हैं, तब इनका प्रभाव, लागत पर, लागत वक्र में खिसकाव द्वारा दर्शाया जाता है। यही कारण है कि हम उत्पाद के अलावा अन्य सभी कारकों को खिसकाव कारक के रूप में जानते हैं। सैद्धांतिक रूप से, विभिन्न कारकों, जो लागत का निर्धारण करते हैं, के बीच कोई अंतर नहीं होता है तथा जो अंतर हमने ऊपर

उत्पादन के स्तर तथा लागत को निर्धारित करने वाले अन्य कारकों के बीच किया है वह कई बार भ्रामक हो सकते हैं। हालांकि, लागत को द्वि-आयामी रेखाचित्र पर दर्शाने के लिए यह अंतर करना पड़ता है ।

8.3.3 अल्पकालीन लागत फलन

अल्पकाल में, उत्पादन के स्तर के अतिरिक्त, तकनीक (प्रौद्योगिकी) तथा साधन कीमत, स्थिर साधन जैसे पूँजीगत उपकरण, भूमि आदि भी उत्पादन की लागतों का निर्धारण करते हैं। इसीलिए, अल्पकालीन लागत फलन इस प्रकार लिखा जाता है :

$$C = f(Q, \bar{T}, \bar{P}_f, \bar{K})$$

जहां, $\bar{K}$ स्थिर साधनों को दर्शाता है। उत्पादन फलन पर चर्चा के दौरान, यह कहा गया था की अल्पकाल में कुछ साधन, जैसे, पूँजीगत उपकरण, भूमि, कारखाने का भवन तथा उच्च प्रबंधकीय कर्मचारी स्थिर रहते हैं। $\bar{K}$ स्थिर साधनों की स्थिरता के तथ्य को रेखांकित करता है। क्योंकि, अल्पकाल में किसी भी परिस्थिति में, स्थिर साधनों की मात्रा बदलती नहीं है, $\bar{K}$ तकनीक तथा साधन कीमतों की तरह खिसकाव कारक नहीं है।

8.4 अल्पकाल में लागत का सिद्धांत

एक फर्म की लागत को अल्पकाल में स्थिर लागत तथा परिवर्ती लागत में बांटा जाता है, इसलिए,

$$TC = TFC + TVC$$

यहां, TC = कुल लागत

TFC = कुल स्थिर लागत

TVC = कुल परिवर्ती लागत

8.4.1 स्थिर लागत

स्थिर लागत को पूरक लागत भी कहते हैं। उत्पादन क्रिया में लगते समय, उत्पादक को कुछ ऐसा व्यय वहन करना पड़ता है जो उत्पादन के किसी भी स्तर पर समान रहता है, इतना कि यदि उत्पादक उत्पादन को पूरी तरह बंद कर दें, तो भी यह लागतें वहन करनी पड़ती हैं।

यह उत्पादन की स्थिर लागत के रूप में जानी जाती हैं। उत्पादक द्वारा संयंत्र तथा मशीनरी को खरीदने के लिए उधार ली गई पूँजी पर ब्याज का भुगतान, प्रबंधकों तथा अधिकारियों का वेतन, आदि पर किया गया व्यय, यह सभी स्थिर लागतें हैं। ये लागतें तब भी स्थिर रहती हैं जब उत्पादन का स्तर बदलता रहता है। भले ही उत्पादक उत्पादन को बंद करने का निर्णय ले ले, उसे इन लागतों को सहन करना पड़ेगा, क्योंकि कारखाने का किराया, प्रबंधकों का वेतन, पूँजी पर ब्याज, आदि का भुगतान करना पड़ेगा। इस चर्चा से यह स्पष्ट हो जाता है कि उत्पादन का स्तर जितना बड़ा होगा, प्रति इकाई स्थिर लागत (या औसत स्थिर लागत) उतनी ही कम होगी।

8.4.2 परिवर्ती लागत

वह लागत जो उत्पादन की मात्रा में परिवर्तन होने के साथ परिवर्तित होती रहती है परिवर्ती लागत के रूप में जानी जाती है।

उदाहरण के लिए, एक निर्माण उद्योग में, कच्चे माल का प्रयोग, उत्पादन प्रक्रिया के दौरान किया जाता है, मशीनों को चलाने के लिए श्रम को रोजगार दिया जाता है, तथा

ऊर्जा (बिजली) का प्रबंध किया जाता है। सामान्यतः इन आगतों पर किया गया व्यय उत्पादन के स्तर में परिवर्तन होने के कारण घटता या बढ़ता रहता है। इस संदर्भ में, यह याद रखना आवश्यक है की जब उत्पादक अल्पकाल में उत्पादन को बंद कर देता है, यह लागत पूरी तरह समाप्त हो जाती है। वास्तव में, उत्पादन के स्तर तथा इन आगतों पर किए जाने वाले व्यय के बीच प्रत्यक्ष संबंध के कारण इस प्रकार के व्यय को परिवर्ती लागत कहते हैं ।

अल्पकाल में कुल लागत, कुल परिवर्ती लागत तथा कुल लागत की अवधारणाओं को तालिका 8.3 की सहायता से सरलता से समझा जा सकता है।

तालिका 8.3 : एक काल्पनिक फर्म की अल्पकालीन लागतें

उत्पाद (इकाई)	कुल स्थिर लागत (रुपए)	कुल परिवर्ती लागत (रुपए)	कुल लागत (रुपए)
0	240	0	240
1	240	120	360
2	240	160	400
3	240	180	420
4	240	212	452
5	240	280	520
6	240	420	660

8.4.3 कुल स्थिर लागत

एक फर्म द्वारा स्थिर आगतों पर किया जाने वाला कुल व्यय, कुल स्थिर लागत कहलाता है। तालिका 8.3 से, यह स्पष्ट है कि फर्म की कुल स्थिर लागत, उत्पादन के स्तर से प्रभावित हुए बिना रु. 240 पर स्थिर रहती है। हमारे उदाहरण में, उत्पादन एक इकाई से 6 इकाइयों तक परिवर्तित होता है, लेकिन कुल स्थिर लागत प्रत्येक स्तर पर 240 पर स्थिर रहती है। यहां तक कि जब फार्म पूरी तरह उत्पादन को बंद कर देती है, जिसका अर्थ है कि उत्पादन का स्तर 0 है, कुल स्थिर लागत अपरिवर्तित रहती है। फर्म का कुल स्थिर लागत फलन चित्र 8.1 में दर्शाया गया है।

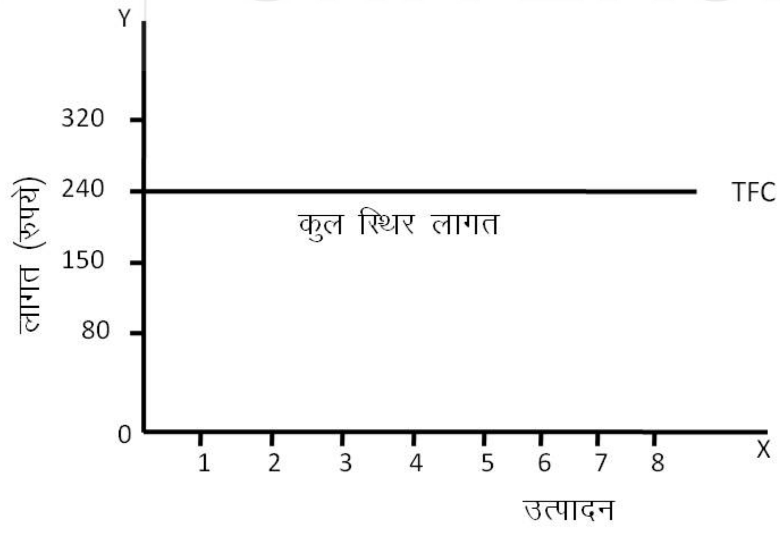

चित्र 8.1 : कुल स्थिर लागत वक्र X अक्ष के समानांतर है, क्योंकि कुल स्थिर लागत उत्पादन के सभी स्तरों पर समान रहती है

8.4.4 कुल परिवर्ती लागत

एक फर्म द्वारा, उत्पादन करने के लिए, परिवर्ती आगतों पर किए जाने वाला व्यय, फर्म की कुल परिवर्ती लागत कहलाता है।

क्योंकि उत्पादन के उच्च स्तर के लिए, परिवर्ती आगतों के सर्वोत्तम उपयोग की आवश्यकता होती है, इसका अर्थ है उच्च कुल परिवर्ती लागत। तालिका 8.3 दर्शाती है कि जैसे फर्म के उत्पादन में वृद्धि होती है फर्म की कुल परिवर्ती लागत में भी वृद्धि होती है। यदि फर्म उत्पादन को पूरी तरह बंद कर देती है, उसे किसी परिवर्तित आगतों की आवश्यकता नहीं रहती और इसलिए, इसकी कुल परिवर्ती लागत शून्य होती है। चित्र 8.2 फर्म के कुल परिवर्ती लागत फलन को दर्शाता है ।

कुल परिवर्ती लागत वक्र की एक विशेषता पर ध्यान दीजिए– आरंभ में यह तेज़ी से बढ़ता है, फिर बढ़ने की दर में गिरावट आती है तथा अंत में यह पुनः तेज़ी से बढ़ने लगता है।

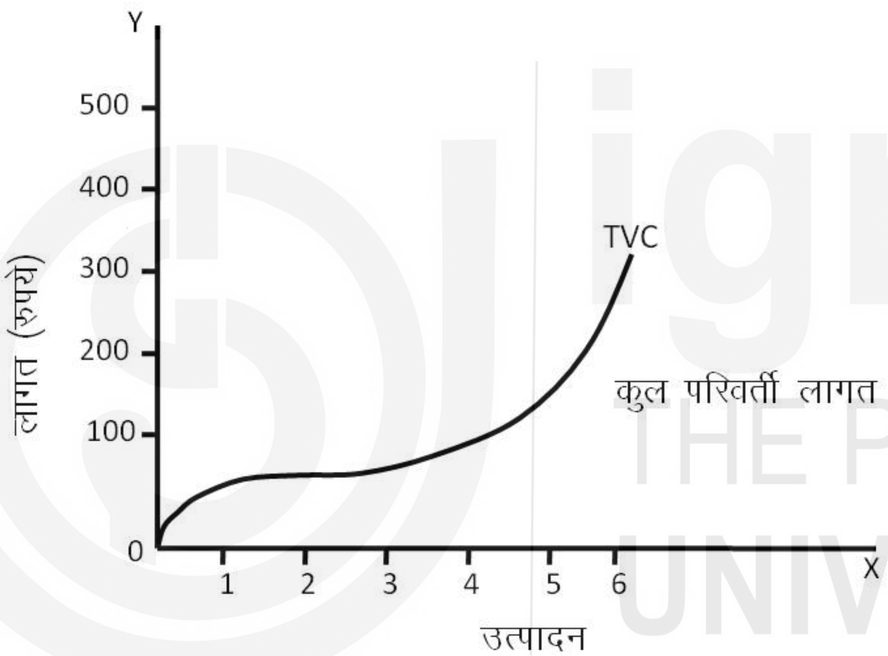

चित्र 8.2: कुल परिवर्ती लागत वक्र बाएं से दाएं ऊपर की ओर उठता है

8.4.5 कुल लागत

कुल लागत कुल स्थिर लागत तथा कुल परिवर्ती लागत का योग होता है। इस प्रकार, दिए गए उत्पादन के स्तर पर एक फर्म की कुल लागत ज्ञात करने के लिए, हमें प्रत्येक उत्पादन स्तर पर केवल कुल परिवर्ती लागत तथा कुल स्थिर लागत का योग करना होगा। परिणाम तालिका 8.3 में दर्शाया गया है तथा कुल लागत फलन को चित्र 8.3 में दर्शाया गया है। क्योंकि कुल लागत फलन तथा कुल परिवर्ती लागत फलन में अंतर केवल कुल स्थिर लागत की मात्रा का है जो अपरिवर्तित है, इन दोनों का आकार समान होता है।

चित्र 8.4 में, ऊपर चर्चा किए गए सभी तीनों लागत फलनों (कुल स्थिर लागत फलन, कुल परिवर्ती लागत फलन तथा कुल लागत फलन) को एक साथ दर्शाया गया है। इन लागत फलन को, जब रेखाचित्र द्वारा दर्शाया जाता है, यह अक्सर लागत वक्र कहलाते हैं।

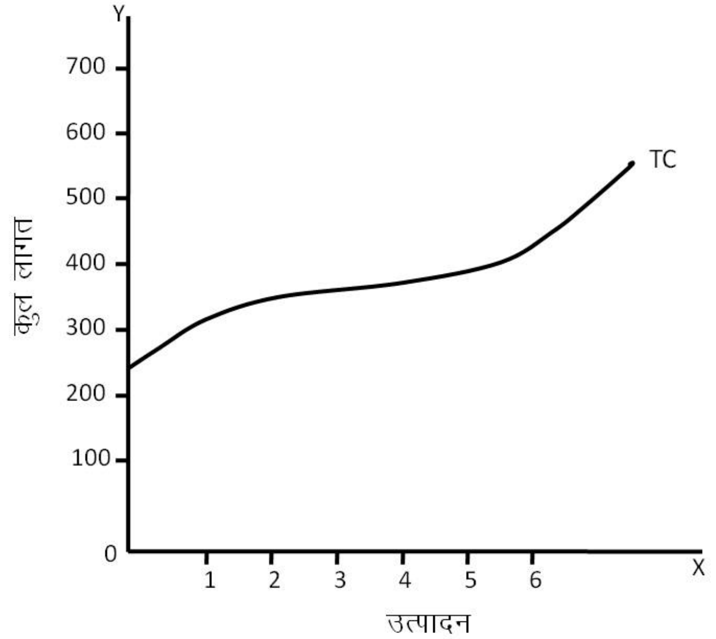

चित्र 8.3 : कुल लागत वक्र को, कुल स्थिर लागत में कुल परिवर्ती लागत को जोड़ कर प्राप्त किया जाता है

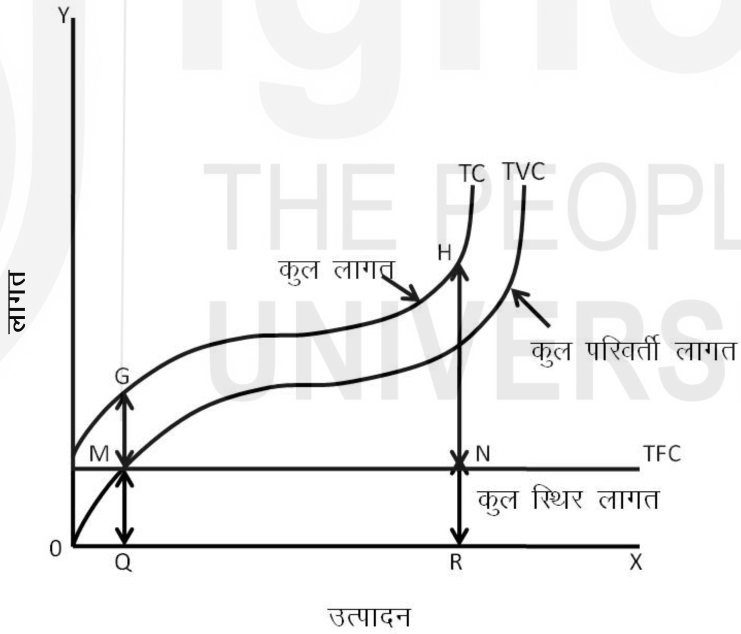

चित्र 8.4 : कुल स्थिर लागत, कुल परिवर्तित लागत और कुल लागत

चित्र 8.4 में, TFC कुल स्थिर लागत वक्र है। क्योंकि यह X अक्ष के समानांतर है, यह इंगित करता है कि उत्पादन का स्तर जो भी हो कुल स्थिर लागत सदैव समान रहती है (अर्थात् यह उत्पादन में परिवर्तन के प्रतिक्रियास्वरूप परिवर्तित नहीं होती है)। TC कुल लागत वक्र है। यह उत्पादन के विभिन्न स्तरों पर कुल स्थिर लागत तथा कुल परिवर्ती लागत के योग को दर्शाता है। यदि उत्पादन के स्तर में वृद्धि करनी है, तो परिवर्ती आगतों के प्रयोग में भी वृद्धि करनी होती है तथा यह लागत को ऊपर की ओर धकेलती है। बाएं से दाएं ऊपर की ओर उठता हुआ कुल लागत वक्र (कुल लागत वक्र का धनात्मक ढाल) इसी तथ्य को दर्शाता है। कुल लागत वक्र तथा कुल स्थिर लागत वक्र के बीच लंबवत दूरी कुल परिवर्ती लागत को दर्शाता है। उदाहरण के लिए, यदि फर्म उत्पादन की OQ इकाइयों का उत्पादन करना चाहता है तो कुल परिवर्ती लागत

GQ – MQ = GM होगी तथा यदि उत्पादन का स्तर OR है, कुल परिवर्ती लागत HR – NR = HN होगी। चित्र 8.4 में कुल परिवर्ती लागत को TVC द्वारा दर्शाया गया है यह कुल लागत वक्र TC के समानांतर है तथा इन दोनों वक्र (TC तथा TVC) के बीच का लंबवत अंतर (दूरी) कुल स्थिर लागत को दर्शाता है।

बोध प्रश्न 2

1) निम्न कथनों में से सत्य या असत्य बताएं :

   i) लागत फलन, उत्पादन तथा लागतों के बीच संबंध की व्याख्या करता है।

   ii) दीर्घकाल में सभी साधन परिवर्ती होते हैं।

   iii) स्थिर लागत को पूरक लागत भी कहा जाता है।

   iv) कुल परिवर्ती लागत फर्म द्वारा स्थिर आगतों पर किया गया कुल व्यय है।

2) दीर्घकालिक लागत फलन तथा अल्पकालिक लागत फलन को परिभाषित करें तथा इनके बीच अंतर बताएं।

....

....

....

3) स्थिर लागत तथा परिवर्ती लागत के बीच अंतर कीजिए।

....

....

....

4) कुल स्थिर लागत तथा कुल परिवर्ती लागत को परिभाषित करें और कुल लागत वक्र की प्रकृति समझाइए।

....

....

....

8.5 अल्पकालिक लागत वक्र

प्रति इकाई लाभ को ज्ञात करने के लिए, फर्म को प्रति इकाई लागत (या औसत लागत) की प्रति इकाई कीमत से तुलना करनी होती है। इसलिए, हमें औसत स्थिर लागत, औसत परिवर्ती लागत तथा औसत कुल लागत की अवधारणा को समझना आवश्यक हो जाता है।

8.5.1 औसत स्थिर लागत

आमतौर पर, वह सभी फर्म जिनकी उत्पादन की लागत में एक बड़ा अनुपात स्थिर लागत होती है, वह अपने उत्पादन के स्तर में उस मात्रा तक वृद्धि करते हैं जब तक प्रति इकाई स्थिर लागत, जिसे अधिकतम औसत स्थिर लागत के रूप में जानते हैं, काफी हद तक कम न हो जाए। औसत स्थिर लागत को ज्ञात करने के लिए, कुल स्थिर लागत को, उत्पादन की मात्रा से भाग करना होता है ।

सूत्र के रूप में,

$$AFC = \frac{TFC}{Q}$$

यहां, AFC = औसत स्थिर लागत है

TFC = कुल स्थिर लागत है

Q = उत्पादन की मात्रा है

तालिका 8.4 : एक फर्म की औसत स्थिर लागत, औसत परिवर्ती लागत तथा औसत कुल लागत

उत्पाद (इकाइयां)	औसत स्थिर लागत TFC ÷ Q	औसत परिवर्ती लागत TVC÷ Q	औसत कुल लागत TC÷ Q
1	240 ÷ 1 = 240	120 ÷ 1 = 120	360 ÷ 1 = 360
2	240 ÷ 2 = 120	160 ÷ 2 = 80	400 ÷ 2 = 200
3	240 ÷ 3 = 80	180 ÷ 3 = 60	420 ÷ 3 = 140
4	240 ÷ 4 = 60	212 ÷ 4 = 53	452 ÷ 4 = 113
5	240 ÷ 5 = 48	280 ÷ 5 = 56	520 ÷ 5 = 104
6	240 ÷ 6 = 40	420 ÷ 6 = 70	660 ÷ 6 = 110

तालिका 8.4 पर एक नजर डालते ही हम देख सकते हैं कि कैसे औसत स्थिर लागत उत्पादन के स्तर के बढ़ने के साथ घटती जाती है। जब पर एक इकाई का उत्पादन करती है, औसत स्थिर लागत रु. 240 है। जैसे-जैसे उत्पादन का विस्तार होता है, यहां औसत स्थिर लागत में तेज़ी से गिरावट आती है तथा जब वस्तु की 6 इकाइयों का उत्पादन होता है यह रु. 40 तक कम हो जाती है।

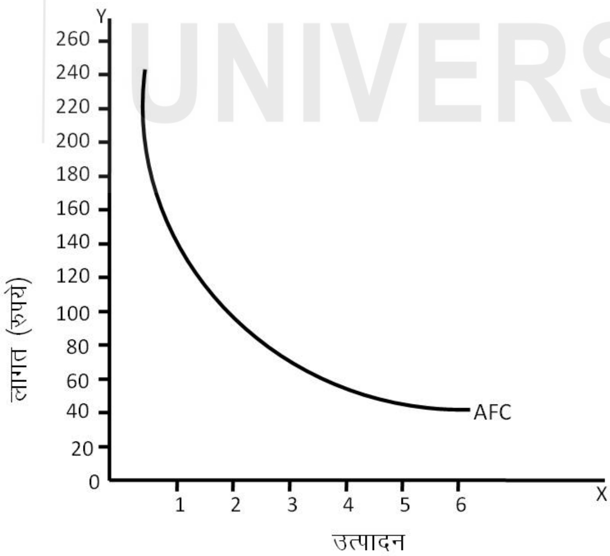

चित्र 8.5 : औसत स्थिर लागत वक्र एक आयताकार अतिपरवलय (Rectangular hyperbola) है

यह तथ्य कि औसत स्थिर लागत, उत्पादन में वृद्धि के साथ घटती है, चित्र 8.5 में दर्शाए गए औसत लागत वक्र की सहायता से सरलता से समझा जा सकता है। इस चित्र में, जब उत्पादन एक इकाई है, औसत स्थिर लागत रु. 240 है। जब उत्पादन बढ़कर 3 इकाइयाँ हो जाता है, तब औसत स्थिर लागत घटकर रु. 80 हो जाती है

तथा जब उत्पादन 6 इकाइयां होता है तब औसत स्थिर लागत घटकर रु. 40 रह जाती है।

औसत स्थिर लागत वक्र (AFC) एक आयताकार अतिपरवलय होता है क्योंकि औसत स्थिर लागत को उत्पादन की मात्रा से गुणा करने पर सदैव एक स्थिर मूल्य प्राप्त होता है जो कुल स्थिर लागत के बराबर होता है (औसत लागत वक्र के नीचे प्रत्येक बिंदु पर समान क्षेत्रफल होता है जो कुल स्थिर लागत के बराबर होता है)।

8.5.2 औसत परिवर्ती लागत

औसत परिवर्ती लागत ज्ञात करने के लिए, हमें कुल परिवर्ती लागत को उत्पादन की मात्रा से भाग करना होगा ।

सूत्र के रूप में,

$$AVC = \frac{TVC}{Q}$$

यहां, AVC = औसत परिवर्ती लागत

TVC = कुल परिवर्ती लागत तथा

Q = उत्पादन की मात्रा

वास्तव में, औसत परिवर्ती लागत वक्र (AVC) हमें मौद्रिक रूप में, वही समान सूचना देता है, जो हम भौतिक रूप में परिवर्ती साधन के औसत उत्पाद वक्र से प्राप्त करते हैं।

परिवर्ती साधन की मात्रा में वृद्धि की स्थिति में, उत्पादन की कुशलता में वृद्धि होती है (परिणामस्वरूप औसत उत्पाद में वृद्धि होती है) तथा औसत परिवर्ती लागत घटती है। यदि औसत उत्पादकता समान रहती है, औसत परिवर्ती लागत भी समान रहती है। जब यह घटती है, औसत परिवर्ती लागत बढ़ती है।

इसलिए, औसत परिवर्ती लागत वक्र, औसत परिवर्ती (साधन) उत्पाद वक्र का पारस्परिक संबंध होता है।

औसत परिवर्ती साधन की उत्पादकता तथा औसत लागत के बीच संबंध को समझने के पश्चात्, औसत परिवर्ती लागत वक्र की प्रकृति को समझना सरल होगा। उत्पादन के नियमों की चर्चा करते समय, हमने कहा था कि यदि अन्य साधनों को स्थिर रखते हुए केवल एक साधन की मात्रा को बढ़ाया जाता है, तो आरंभ में बढ़ते प्रतिफल की प्रवृति देखने को मिलती है। तदुपरांत, इसी क्रम में, स्थिर प्रतिफल होते हैं तथा घटते प्रतिफल होते हैं। इसका अर्थ है कि आरंभ की अवस्था में औसत परिवर्ती लागत घटती है तथा, न्यूनतम बिंदु पर पहुंचने के पश्चात् बढ़ना शुरू हो जाती है। यह वृद्धि उत्पादन के घटते प्रतिफल के नियम लागू होने के कारण होती है। तालिका 8.4 से हमने सीखा है कि उत्पादन की एक इकाई के स्तर पर फर्म की औसत परिवर्ती लागत रु. 120 है। जब उत्पादन में वृद्धि होती है तब यह घटती है तथा जब वस्तु की 4 इकाइयों का उत्पादन होता है यह रु. 53 है। उसके पश्चात यह बढ़ती है तथा जब उत्पादन का स्तर बढ़कर 6 इकाइयां हो जाता है यह रु. 70 है। इसलिए औसत परिवर्ती लागत वक्र U आकार का होता है, जैसा चित्र 8.6 में दर्शाया गया है।

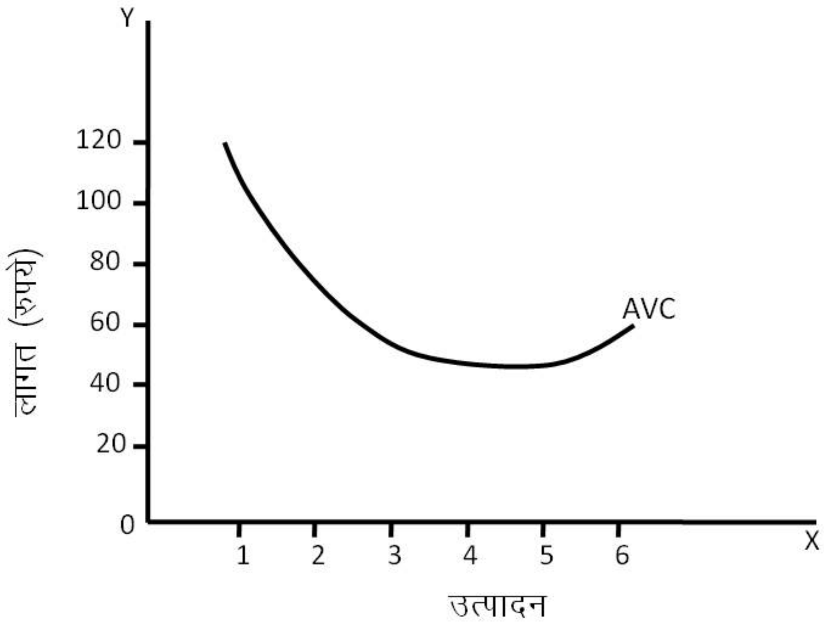

चित्र 8.6 : औसत परिवर्ती लागत वक्र U-आकार का वक्र होता है

8.5.3 औसत कुल लागत

औसत कुल लागत को औसत लागत भी कहते हैं। औसत लागत को ज्ञात करने के लिए, हम कुल लागत को (जो कुल स्थिर लागत तथा कुल परिवर्ती लागत का योग है) उत्पादन की मात्रा से भाग करते हैं

सूत्र के रूप में,

$$AC \text{ अथवा } ATC = \frac{TC}{Q} = \frac{TFC}{Q} + \frac{TVF}{Q}$$

आधुनिक अर्थशास्त्री सामान्यतः इससे सहमत हैं कि आर्थिक क्रिया के सभी क्षेत्रों में औसत कुल लागत आरंभ में घटती है। इसके वही समान कारण है जो आरंभिक अवस्था में बढ़ते प्रतिफल के कारण होते हैं। औसत लागत आरंभ में घटती है क्योंकि कुछ संसाधन अविभाज्य होते हैं तथा अभी उत्पादन प्रक्रिया में विशिष्टीकरण की संभावना है। जब तक अविभाज्य साधन पूरी तरह प्रयोग नहीं हो जाते, औसत कुल लागत घटती है तथा उत्पादन में विस्तार एक ऐसी अवस्था की ओर ले जाता है जहां अविभाज्य संसाधन पूरी तरह प्रयोग किए जाते हैं तथा उत्पादन के साधनों के बीच एक अनुकूलतम अनुपात स्थापित हो जाता है। इस बिंदु पर प्राप्त किया गया उत्पादन अनुकूलतम उत्पादन होता है। यहां औसत कुल लागत न्यूनतम होती है। यदि इस बिंदु (जो संसाधनों के अनुकूलतम संयोग को दर्शाता है) के आगे परिवर्ती आगतों की मात्रा में वृद्धि करके, उत्पादन को बढ़ाया जाता है, तब कुल उत्पाद में घटती दर से वृद्धि होती है। यह औसत कुल लागत में वृद्धि करता है। यह दर्शाता है कि क्यों औसत कुल लागत वक्र U आकार का होता है, जैसा चित्र 8.7 में दर्शाया गया है। तालिका 8.4 में दिया गया उदाहरण इस बात को पूरी तरह स्पष्ट कर देता है।

हम चित्र 8.8 में खींचे गए औसत परिवर्ती लागत वक्र AVC तथा औसत स्थिर लागत वक्र AFC की सहायता से औसत कुल लागत वक्र ATC को बेहतर तरह से समझ सकते हैं। क्योंकि औसत कुल लागत वक्र, औसत परिवर्ती लागत वक्र तथा औसत स्थिर लागत वक्र को लंबवत् जोड़कर प्राप्त करते हैं। अतः, जब औसत परिवर्ती लागत वक्र तथा औसत स्थिर लागत वक्र दोनों नीचे की ओर ढालू होते हैं, औसत कुल लागत वक्र भी नीचे की ओर ढालू होता है। औसत परिवर्ती लागत वक्र पर बिंदु R, औसत परिवर्ती

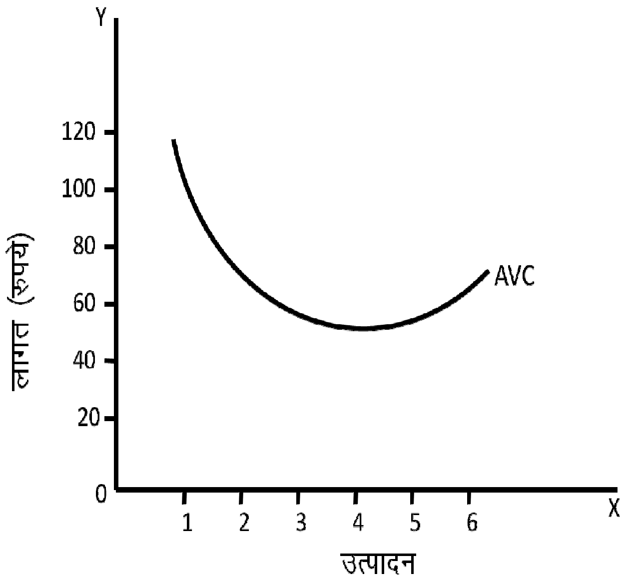

चित्र 8.7 : औसत कुल लागत वक्र कुल लागत को उत्पादन की मात्रा से भाग करने पर प्राप्त होता है

लागत का न्यूनतम दर्शाता है। इस बिंदु के पश्चात औसत परिवर्ती लागत बढ़ना आरंभ करती है तथा इसलिए औसत परिवर्ती लागत वक्र ऊपर की ओर उठने लगता है। मगर, औसत स्थिर लागत में होने वाली गिरावट, औसत परिवर्ती लागत में होने वाली वृद्धि के लिए आवश्यक क्षतिपूर्ति से कहीं अधिक होती है। इस कारण से, औसत कुल लागत वक्र नीचे की ओर ढालू होता है। क्योंकि, औसत परिवर्ती लागत वक्र पर स्थित T बिंदु पर, औसत परिवर्ती लागत के बढ़ने की दर, उत्पादन के इस स्तर पर, औसत स्थिर लागत के घटने की दर के समान होती है, उत्पादन के इस स्तर पर औसत कुल लागत न्यूनतम होती है। इस बिंदु के पश्चात जैसे-जैसे उत्पादन के स्तर में वृद्धि होती है, औसत स्थिर लागत के घटने की दर से कहीं ज़्यादा तेजी से, औसत परिवर्ती लागत बढ़ती है। इसलिए, औसत कुल लागत वक्र ऊपर की ओर ढालू होता है।

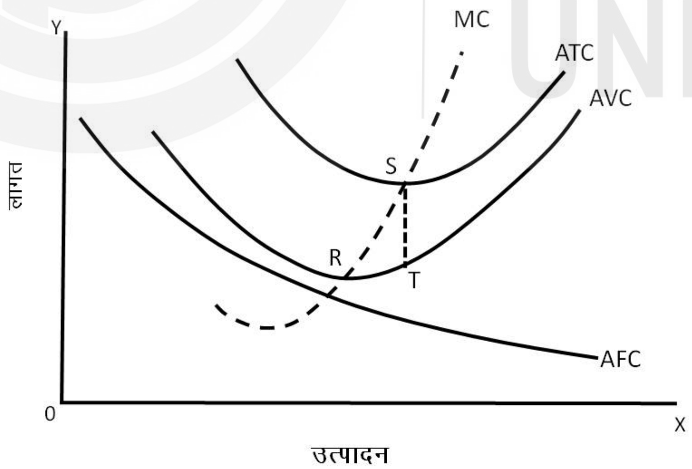

चित्र 8.8 : औसत कुल लागत, औसत स्थिर लागत तथा औसत परिवर्ती लागत का लंबवत योग होता है

8.5.4 सीमांत लागत

सीमांत लागत, उत्पादन में होने वाली एक इकाई की या थोड़ी-सी वृद्धि के कारण, कुल लागत में होने वाली वृद्धि होती है।

सूत्र के रूप में,

$$MC = \frac{\Delta TC}{\Delta Q} \text{ अथवा } \frac{\Delta TVC}{\Delta Q}$$

जहां, MC = सीमांत लागत है

ΔTC = कुल लागत में परिवर्तन है, जो उत्पादन में होने वाले लघु परिवर्तन से संबंधित है

ΔTVC = कुल परिवर्ती लागत में परिवर्तन है जो उत्पादन में होने वाले लघु परिवर्तन से संबंधित है

ΔQ = उत्पादन की मात्रा में लघु परिवर्तन है

सीमांत लागत की अवधारणा को एक उदाहरण की सहायता से सरलता से समझा जा सकता है। तालिका 8.5 में, उत्पाद की दो इकाइयों का उत्पादन करने की कुल लागत रु. 400 है तथा 2 + 1 या तीन इकाइयों का उत्पादन करने के लिए कुल लागत रु. 420 है। इसलिए सीमांत लागत रु. 20 है जो रु. 420 – रु. 400 है।

तालिका 8.5 : सीमांत लागत की गणना

उत्पाद इकाइयां	कुल लागत (रु)	कुल परिवर्ती लागत (रु)	सीमांत लागत (रु)
0	240	0	–
1	360	120	120
2	400	160	40
3	420	180	20
4	452	212	32
5	520	280	68
6	660	420	140

क्योंकि, अल्पकाल में स्थिर लागत अपरिवर्तित रहती है, सीमांत लागत को, उत्पादन में हुई लघु वृद्धि के परिणामस्वरूप, कुल परिवर्ती लागत में हुई वृद्धि के रूप में भी परिभाषित किया जा सकता है। उपरोक्त तालिका 8.5 से यह ज्ञात होता है कि दो इकाइयों के उत्पादन की परिवर्ती लागत रु. 160 है तथा 3 इकाइयों की रु. 180 है। इस प्रकार, सीमांत लागत रु. 180 – रु. 160 = रु. 20 होगी। सीमांत लागत वक्र जैसा कि चित्र 8.9 से स्पष्ट है, U आकार का होता है। इसका तात्पर्य है कि सीमांत लागत वक्र पहले नीचे की ओर ढालू होता है तथा उसके पश्चात उस बिंदु पर जहां सीमांत लागत न्यूनतम होती है, यह ऊपर की ओर उठना शुरू कर देता है क्योंकि उत्पादन के निम्नस्तर पर, उत्पादन में वृद्धि के साथ सीमांत लागत वक्र ऊपर की ओर बढ़ना शुरू करता है। वास्तव में, सीमांत लागत वक्र का आकार, परिवर्ती अनुपात के नियम के कारण है। परिवर्ती अनुपात के नियम के अनुसार, उत्पादन के निम्नस्तर पर परिवर्ती आगतों में वृद्धि से सीमांत उत्पाद बढ़ता है तथा उसके पश्चात उत्पादन में विस्तार के साथ घटता है। इसलिए, सीमांत उत्पाद वक्र पहले गिरता है तथा बाद में उठता है। सीमांत लागत वक्र के विषय में दो महत्त्वपूर्ण बिंदु स्मरणीय हैं।

i) सीमांत लागत वक्र अपने न्यूनतम पर बिंदु औसत कुल लागत तथा औसत परिवर्ती लागत वक्र के अपने-अपने न्यूनतम बिंदु पर पहुंचने से पहले पहुंचता है; तथा

ii) जब सीमांत लागत वक्र बढ़ता है, यह औसत परिवर्ती लागत वक्र तथा औसत लागत वक्र को इनके न्यूनतम पर काटता है।

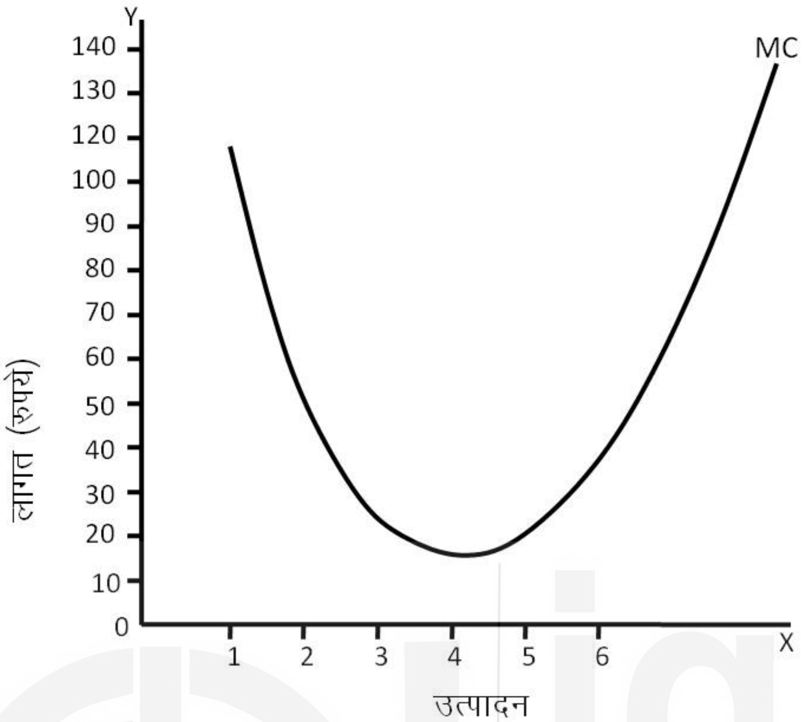

चित्र 8.9 : सीमांत लागत वक्र U-आकार का वक्र है

8.5.5 सीमांत लागत तथा औसत लागत के बीच संबंध

सीमांत लागत (MC) वक्र तथा औसत लागत वक्र (ATC) और औसत परिवर्ती लागत वक्र (AVC) के बीच घनिष्ठ संबंध होता है। हम यहां केवल, सीमांत लागत वक्र तथा औसत कुल लागत वक्र के मध्य संबंध की व्याख्या करेंगे, लेकिन सीमांत लागत वक्र तथा औसत परिवर्ती लागत वक्र की मध्य संबंध की इन्हीं समान कारणों के आधार पर व्याख्या की जा सकती है।

चित्र 8.10 लागत वक्र को औसत कुल लागत वक्र तथा औसत परिवर्ती लागत वक्र के साथ दर्शाता है सीमांत लागत वक्र तथा औसत कुल लागत वक्र के मध्य संबंध निम्न प्रकार है :

i) जब सीमांत लागत वक्र औसत लागत वक्र के नीचे होता है (जिसका अर्थ है सीमांत लागत औसत लागत से कम होती है) तब औसत लागत वक्र घटता है।

ii) जब सीमांत लागत वक्र औसत लागत वक्र के ऊपर होता है (जिसका अर्थ है सीमांत लागत औसत लागत से अधिक होती है), तब औसत लागत वक्र बढ़ता है।

iii) सीमांत लागत वक्र औसत लागत वक्र को उसके न्यूनतम बिंदु पर काटता है।

सीमांत लागत वक्र तथा औसत कुल लागत वक्र के मध्य ऊपर बताए गए संबंध का कारण बहुत सरल है। जब तक सीमांत लागत वक्र औसत लागत वक्र से नीचे रहता है तो यह औसत कुल लागत वक्र को नीचे की ओर खींचता है; जब सीमांत लागत वक्र

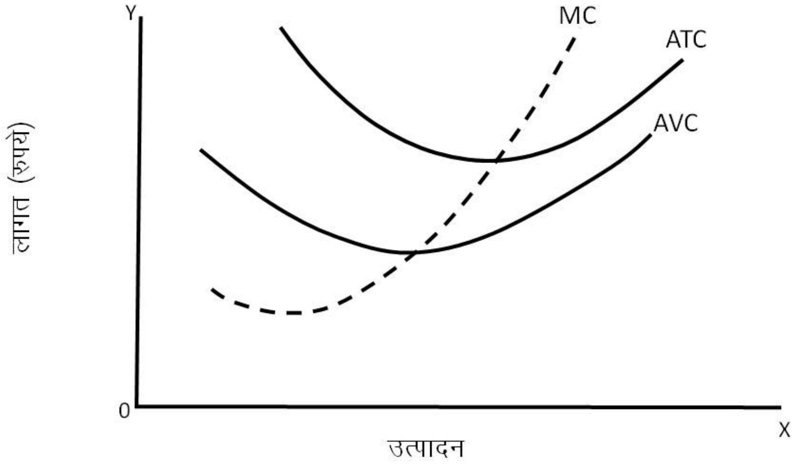

चित्र 8.10 : सीमांत लागत वक्र औसत परिवर्ती लागत वक्र तथा औसत कुल लागत वक्र को उनके न्यूनतम बिंदुओं पर काटता है

औसत लागत वक्र से ऊपर उठता है, तभी वह औसत लागत वक्र को ऊपर की ओर खींचता है। इसके फलस्वरूप, सीमांत लागत तथा औसत कुल लागत उस बिंदु पर समान होते हैं जहां सीमांत लागत वक्र औसत कुल लागत वक्र को काटता है। आगे, जब उत्पादन कम होता है, सीमांत लागत औसत कुल लागत की तुलना में कम रहती है; किंतु जब उत्पादन में विस्तार होता है, सीमांत लागत औसत लागत से अधिक हो जाती है। इस प्रकार, यह स्वाभाविक है कि सीमांत लागत वक्र, औसत लागत वक्र को उसके न्यूनतम बिंदु पर काटता है।

सीमांत लागत वक्र तथा औसत लागत वक्र के मध्य संबंध का एक अन्य महत्त्वपूर्ण पहलू यह है कि सीमांत लागत केवल परिवर्ती लागत द्वारा प्रभावित होती है। स्थिर लागतें सीमांत लागत को प्रभावित नहीं करतीं। यह बीजगणित द्वारा निम्न प्रकार सिद्ध किया जा सकता है :

$$MC_N = TC_N - TC_{N-1}$$

$$= (TFC_N + TVC_N) - (TFC_{N-1} + TVC_{N-1})$$

क्योंकि TFC_N सदैव TFC_{N-1} के समान रहता है, अतः हम यह भी कह सकते हैं :

$$MC_N = TFC_N + TVC_N - TFC_{N-1} - TVC_{N-1}$$

$$= TVC_N - TVC_{N-1}$$

यह सिद्ध करता है कि सीमांत लागत केवल कुल परिवर्ती लागत द्वारा प्रभावित होती है, कुल स्थिर लागत द्वारा नहीं।

बोध प्रश्न 3

1) निम्न कथनों को सत्य या असत्य के रूप में दर्शाएं :

   i) औसत परिवर्ती लागत वक्र एक आयताकार अतिपरवलय होता है।

   ii) औसत परिवर्ती लागत वक्र, औसत परिवर्ती साधन उत्पादकता वक्र का उल्टा होता है।

   iii) औसत कुल लागत वक्र उल्टे U-आकार का होता है।

   iv) जब सीमांत लागत वक्र औसत लागत वक्र के नीचे होता है, औसत लागत वक्र बढ़ता है।

2) औसत लागत क्या है? औसत लागत वक्र की प्रकृति क्या होती है?

....

....

....

3) औसत लागत तथा सीमांत लागत को परिभाषित करें और दोनों के बीच अंतर स्पष्ट करें।

....

....

....

4) सीमांत लागत तथा औसत लागत के बीच संबंध की व्याख्या कीजिए। क्या यह संभव है कि सीमांत लागत लगातार बढ़ रही है जबकि औसत लागत घट रही हो?

....

....

....

5) निम्नलिखित तालिका एक फर्म के उत्पादन के विभिन्न स्तरों पर कुल लागत कुल स्थिर लागत तथा कुल परिवर्ती लागत की सूचना प्रदान करती है :

उत्पाद ⟶	0	1	2	3	4	5	6
कुल स्थिर लागत TFC (रु)	120	120	120	120	120	120	120
कुल परिवर्ती लागत TVC (रु)	0	60	80	90	105	140	210
कुल लागत TC (रु)	120	180	200	210	225	260	330

ज्ञात करें : (i) औसत स्थिर लागत AFC, (ii) औसत परिवर्ती लागत AVC, (iii) औसत लागत AC, (iv) सीमांत लागत MC

....

....

....

8.6 दीर्घकालिक लागत वक्र

दीर्घकाल में सभी संसाधन परिवर्ती होते हैं। उत्पादन फलन में स्थिर साधनों की अनुपस्थिति के कारण, दीर्घकाल में उत्पादन की सभी लागतें परिवर्ती होती हैं तथा इसलिए स्थिर लागत तथा परिवर्ती लागत के बीच अंतर करने की कोई आवश्यकता नहीं होती जैसे हमने अल्पकाल में की थी। दीर्घकाल में, उत्पादन के स्तर को बढ़ाने के लिए, सभी साधनों को बढ़ाना पड़ता है तथा इसके परिणामस्वरूप पैमाने का विस्तार होता है।

अल्पकाल में, एक फर्म की उत्पादन क्षमता कारखाने के आकार पर निर्भर करती है। आमतौर पर, एक फर्म के समक्ष अनेक विकल्प होते हैं। अपनी परिस्थितियों के अनुसार,

उपलब्ध छोटे या बड़े कारखाने में से, यह कोई भी कारखाना चुन सकती है। हम कल्पना करते हैं कि एक फर्म के पास तीन विकल्प हैं तथा उनके अनुसार, अल्पकाल औसत कुल लागत वक्र चित्र 8.11 में दिए गए हैं। हम सबसे छोटे कारखाने को A पुकारते हैं, मध्यम आकार के कारखाने को B तथा बड़े आकार के कारखाने को C। इन कारखानों के अनुसार इनके अल्पकालीन औसत कुल लागत वक्र को $SATC_a$, $SATC_b$ तथा $SATC_c$ नाम दिया गया है।

एक फर्म, बाज़ार विचार को ध्यान में रखते हुए कारखाने के आकार के विषय में निर्णय लेती है। यदि मांग कम है, तो फर्म उत्पादन के उद्देश्य से कारखाने A का चुनाव करता है, लेकिन यह करते समय उत्पादक को उच्च औसत कुल लागत सहन करनी पड़ेगी। यदि फर्म को उत्पादन की OQ_2 मात्रा का उत्पादन करना है, तो फर्म के सामने दो विकल्प हैंः पहला, यह कारखाने A को लगा सकती है, इस फर्म के उत्पादन का अनुकूलतम स्तर जो है वह इस कारखाने की सहायता से उत्पादन कर सकती है स्वयं OQ_2 बिंदु पर स्थित है दूसरा, यह कारखाने B का चुनाव कर सकती हैं यदि यह ऐसा करती है, तो कारखाने B की क्षमता का पूरी तरह उपयोग नहीं हो पाएगा, फिर भी उत्पादन की प्रति इकाई लागत, उत्पादन की उस लागत से कम होगी जो फर्म को कारखाने A की सहायता से OQ_2 उत्पादन की मात्रा का उत्पादन करने के लिए वहन करनी पड़ेगी (भले ही कारखाने A द्वारा किया जाने वाला उत्पादन का अनुकूलतम स्तर OQ_2 है)। यह पैमाने के बढ़ते प्रतिफल की प्रवृत्ति के कारण होता है। ऐसा नहीं है कि कारखाना C आकार में कारखाने B से बड़ा है तो भी, कारखाने C का अल्पकाल औसत कुल लागत वक्र $SATC_c$, कारखाने B के अल्पकाल औसत कुल लागत वक्र $SATC_b$ से अधिक है। यदि फर्म, इस स्थिति में कारखाने C का चयन करती है, तब पैमाने के घटते प्रतिफल लागू होने के कारण औसत कुल लागत बढ़ती है।

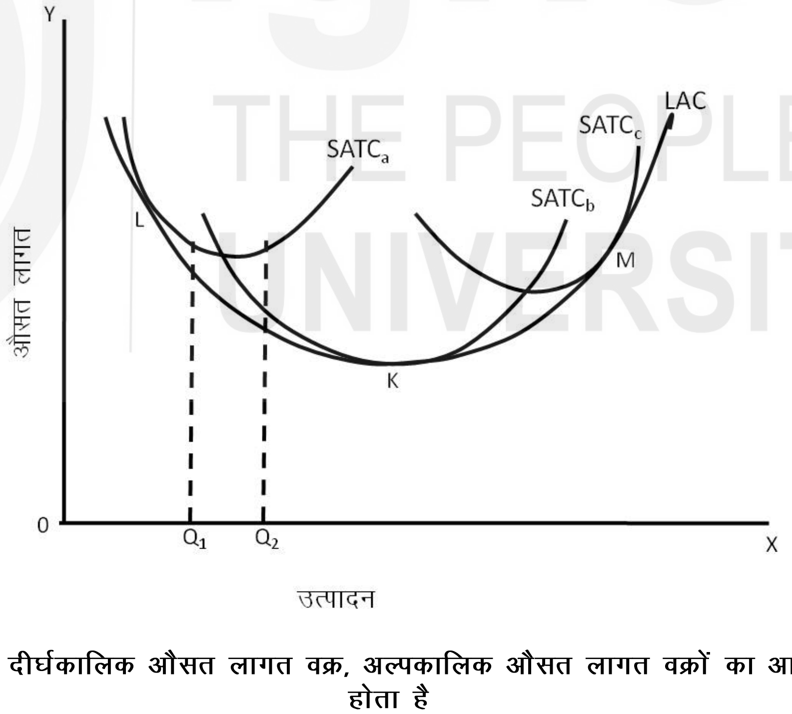

चित्र 8.11ः दीर्घकालिक औसत लागत वक्र, अल्पकालिक औसत लागत वक्रों का आवरण वक्र होता है

सैद्धांतिक रूप से कहें तो, दीर्घकालिक औसत लागत (LAC) वक्र अल्पकालिक औसत लागत (SATC) वक्रों को उनके न्यूनतम बिंदुओं पर छूता है। रेखागणित के अनुसार यह केवल उन परिस्थितियों में संभव है जब पैमाने के स्थिर प्रतिफल की प्रवृत्ति लागू होती है। यह इस तथ्य के कारण होती है कि आरंभ में उत्पादन प्रक्रिया में पैमाने के बढ़ते प्रतिफल तथा कुछ समय पश्चात पैमाने के घटते प्रतिफल लागू होते हैं जिससे दीर्घकाल औसत लागत वक्र अल्पकाल औसत लागत वक्र के न्यूनतम बिंदु को छूता है। पैमाने के बढ़ते प्रतिफल की अवस्था में जब औसत कुल लागत घटती है, दीर्घकाल औसत लागत वक्र, अल्पकाल औसत लागत वक्र को अल्पकाल औसत लागत वक्र के

न्यूनतम बिंदु के बायीं ओर छूता है तथा पैमाने के घटते प्रतिफल की अवस्था में इस वक्र के न्यूनतम बिंदु के दाएं ओर छूता है। चित्र 8.11 में, दीर्घकाल औसत लागत वक्र अल्पकाल औसत लागत वक्र ($SATC_b$) को उसके न्यूनतम (बिंदु K पर) छूता है, $SATC_a$ वक्र को न्यूनतम बिंदु के बायीं ओर (बिंदु L पर) छूता है तथा $SATC_c$ वक्र को न्यूनतम बिंदु के दायीं ओर (बिंदु M पर) छूता है।

अर्थशास्त्र में, हम कहते हैं कि दीर्घकाल औसत लागत वक्र, अल्पकाल औसत लागत वक्र का आवरण वक्र है।

8.6.1 दीर्घकाल आर्थिक कुशलता

एक फर्म जिसका व्यवहार अल्पकाल में कुशल प्रतीत होता है वहीं दीर्घकाल में अकुशल पाया जा सकता है। इसे समझने के लिए आइए हम चित्र 8.12 को देखते हैं। मान लीजिए एक फर्म उत्पादन की OQ_1 मात्रा उत्पादन कर रही है। यदि मांग में वृद्धि के कारण फर्म उत्पादन की Q_1Q_2 मात्रा बढ़ाना चाहती है, अल्पकाल में कारखाने को बदलना संभव नहीं है तथा केवल परिवर्ती साधनों मे वृद्धि की जा सकती है। इसलिए, फर्म अल्पकालीन औसत कुल लागत वक्र पर आगे की ओर परिसंचलन करती है। परिणामस्वरूप, परिवर्ती साधनों की कुशलता में वृद्धि होती है तथा प्रति इकाई उत्पादन लागत BQ_1 से JQ_2 तक घटती है। अल्पकाल में कुशलता के स्तर को और आगे बेहतर नहीं किया जा सकता क्योंकि यही उत्पादन का अनुकूलतम स्तर है जो कि उपलब्ध कारखाने की सहायता से प्राप्त किया जा सकता है। हालांकि, दीर्घकाल में उत्पादन के OQ_2 स्तर का उत्पादन करने के लिए, इस प्रकार के छोटे आकार के कारखाने का प्रयोग अकुशल होगा। फर्म एक बड़े आकार के कारखाने का प्रयोग करती है, यह वर्धमान प्रतिफल के लाभ प्राप्त करेगी जो उसे उपलब्ध हो जाएंगे। इसके परिणामस्वरूप, प्रति इकाई लागत घटती है तथा वह KQ_2 के स्तर तक नीचे आ जाती है। हालांकि, इस कारखाने की क्षमता का पूरी तरह प्रयोग नहीं किया गया है, फिर भी यह पिछले कारखाने की तुलना में अधिक कुशल होगा।

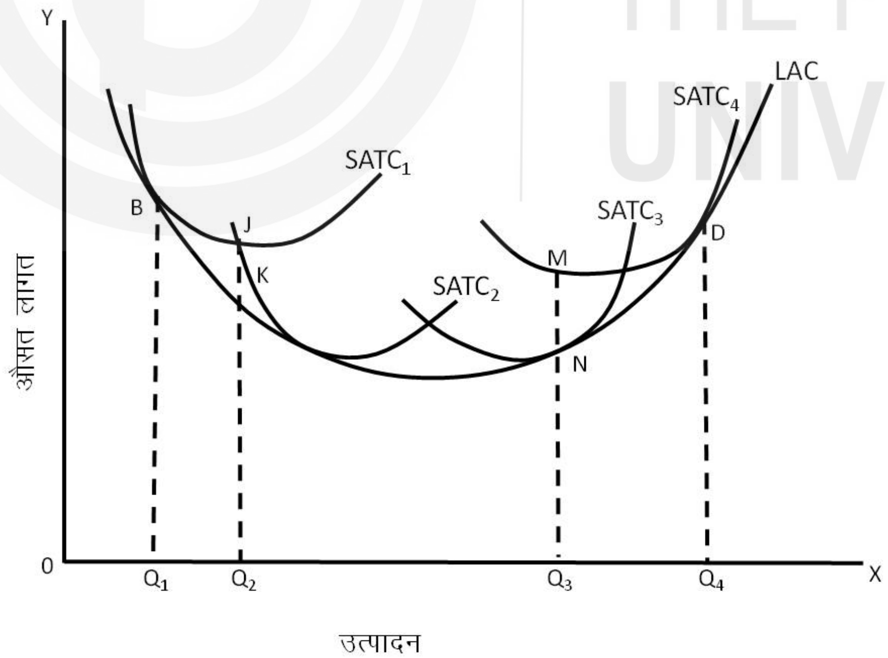

चित्र 8.12 : दीर्घकाल आर्थिक कुशलता की व्याख्या

ठीक इसी प्रकार जब पैमाने में विस्तार से मितव्ययता या पैमाने के घटते प्रतिफल पैदा होते हैं, यह फर्म के हित में होता है कि वह उत्पादन के स्तर में कमी करें। यदि फर्म चित्र 8.12 में उत्पादन की OQ_4 मात्रा का उत्पादन कर रही है तो यह लाभ को अधिकतम करने के दृष्टिकोण से सही रणनीति नहीं होगी। फर्म अल्पकाल में उत्पादन

की मात्रा में Q_3Q_4 की कमी कर सकती है इससे औसत कुल लागत में DQ_4 से MQ_3 तक की कमी करना संभव होगा। इसका परिणाम यह होगा कि कारखाने का कुशलता उपयोग हो सकेगी। तो भी, दीर्घकाल में, यह स्थिति संतोषजनक नहीं होगी क्योंकि फर्म, अपने कारखाने के आकार को छोटा करके, अपनी औसत लागत को NQ_3 के स्तर तक कम कर सकती है। क्योंकि $NQ_3 < MQ_3$, इसलिए जो स्थिति अल्पकाल में फर्म के लिए अनुकूलतम थी वह दीर्घकाल में अपर्याप्त बन जाती है। यह स्पष्ट है कि जब फर्म तुलनात्मक रूप से एक छोटे आकार के कारखाने का प्रयोग करती है, वह तकनीकी रूप से अनुकूलतम मात्रा से कहीं अधिक उत्पादन करती है तो भी उसकी लागत कम रहती है क्योंकि बड़े आकार के कारखाने की अमितव्ययताओं को कम करना संभव होता है।

8.6.2 दीर्घकाल औसत लागत वक्र

हमने पूर्व में इस बात की विस्तार से चर्चा की है कि अल्पकाल में औसत कुल लागत वक्र यू आकार का होता है। आइए अब हम दीर्घकाल औसत लागत वक्र के आकार की चर्चा करते हैं। यह एक सामान्य धारणा है की दीर्घकालि औसत लागत वक्र आरंभ में पैमाने की मितव्ययों के कारण घटता है लेकिन यह अंतिम तौर पर नहीं कहा जा सकता कि क्या यह एक विशेष बिंदु तक घटता है तथा उसके पश्चात स्थिर हो जाता है या पुनः बढ़ने लगता है।

परंपरागत विश्लेषण में, दीर्घकाल औसत लागत वक्र को यू आकार का माना गया है (जैसा चित्र 8.12 में दिखाया गया है)। दीर्घकालीन औसत लागत वक्र का आकार इस मान्यता पर आधारित है कि उत्पादन प्रक्रिया में, अंत में (अंततोगत्वा) घटते प्रतिफल की प्रवृत्ति लागू होती है। यदि अर्थशास्त्रियों की इस धारणा को सही माना जाए कि प्रत्येक उत्पादक लाभ को अधिकतम करना चाहता है तथा उत्पादन की परिस्थितियां पूर्णतया प्रतियोगी हैं, तब यह कहना सत्य होगा कि दीर्घकालिक औसत लागत वक्र अंत में दायीं ओर ऊपर की ओर अवश्य उठता है।

8.6.3 दीर्घकाल सीमांत लागत वक्र

अल्पकाल सीमांत लागत के अर्थ को समझने के पश्चात, यह समझना कठिन नहीं होगा कि दीर्घकाल सीमांत लागत क्या है? दीर्घकाल सीमांत लागत उत्पादन में हुए लघु परिवर्तन के परिणामस्वरूप कुल लागत में होने वाले परिवर्तन को लक्षित करती है, जब फर्म के पास उत्पादन में उपयोग होने वाले संसाधनों की मात्रा में यथोचित समायोजन करके उत्पादन की मात्रा में परिवर्तन करने के लिए पर्याप्त समय होता है। इस समायोजन में कारखाना भी शामिल होता है। जैसा कि देखा जा सकता है, दीर्घकाल सीमांत लागत की यह परिभाषा व्यावहारिक तौर पर बिल्कुल पहले दी गई अल्पकाल सीमांत लागत की परिभाषा के समान है। इन दोनों में एकमात्र अंतर यह है कि जहां अल्पकाल में मौजूदा कारखाने के साथ ही उत्पादन में वृद्धि की जाती है वहीं दीर्घकाल में कारखाना ही स्वयं बदल जाता है।

जहां तक दीर्घकाल सीमांत लागत वक्र तथा दीर्घकाल औसत लागत वक्र के बीच संबंध की बात है, यह ठीक वैसा ही समान संबंध है जैसे अल्पकाल सीमांत लागत वक्र तथा अल्पकाल औसत कुल लागत वक्र के मध्य मौजूद होता है। यह चित्र 8.13 को एक बार देखने से ही स्पष्ट हो जाएगा।

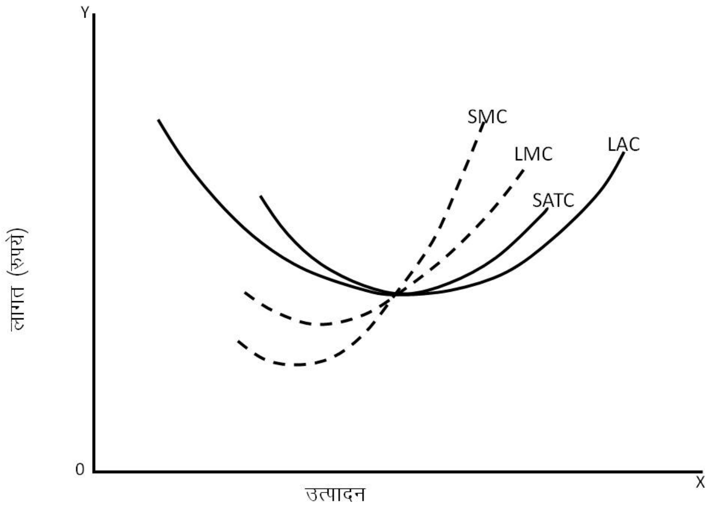

चित्र 8.13 : दीर्घकाल सीमांत तथा औसत लागत वक्र

8.6.4 दीर्घकाल सीमांत लागत तथा अल्पकाल सीमांत लागत के बीच संबंध

जब एक दी गई निश्चित उत्पादन की मात्रा का उत्पादन करने के लिए, एक फर्म सर्वाधिक कुशलतम कारखाने को स्थापित करती है, उसकी अल्पकाल सीमांत लागत दीर्घकाल सीमांत लागत की बराबर हो जाती है। आइए, चित्र 8.14 की सहायता से हम इसकी व्याख्या करें। इस चित्र में, दी गई उत्पादन की मात्रा OQ_1 है। इस उत्पाद का उत्पादन न्यूनतम प्रति इकाई लागत पर कारखाने A की सहायता से हो सकता है। फर्म का अल्पकाल औसत लागत वक्र (जब वह कारखाने A की सहायता से उत्पादन करती है) SAC द्वारा दर्शाया गया है। अन्य कारखानों के अल्पकाल औसत लागत वक्र चित्र 8.14 में नहीं दर्शाए गए हैं। चित्र से यह स्पष्ट है कि उत्पादन के OQ_1 स्तर पर, अल्पकाल सीमांत लागत (SMC) तथा दीर्घकाल सीमांत लागत (LMC) समान हैं। हलांकि, हमें यह अवश्य देखना चाहिए कि यह दोनों समान क्यों होनी चाहिए।

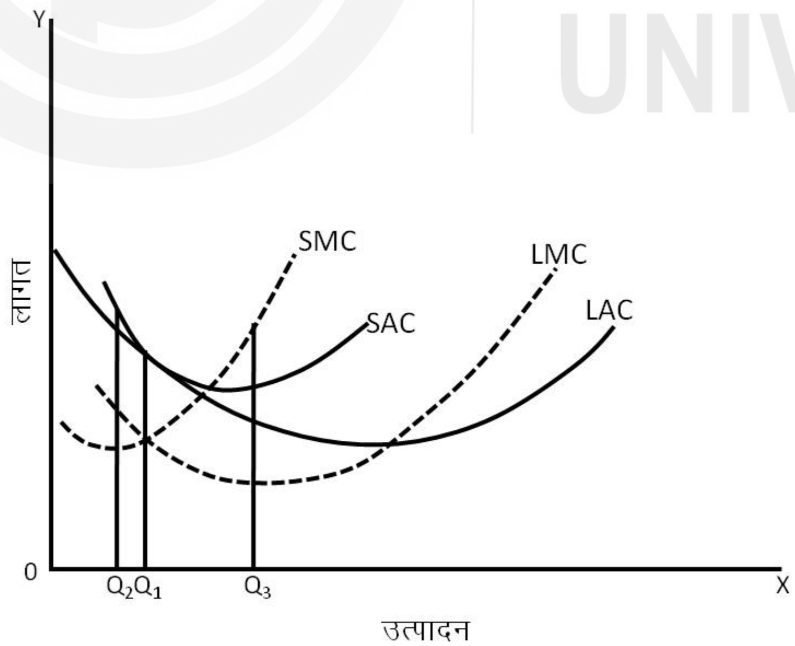

चित्र 8.14 : अनुकूलतम आकार के कारखाने का प्रयोग करने पर अल्पकाल सीमांत लागत तथा दीर्घकाल सीमांत लागत में समानता

यह जानने के लिए कि OQ_2 उत्पादन स्तर पर SMC और LMC समान क्यों हैं, हम उत्पादन स्तर में कुछ छोटे-से परिवर्तन करके देख सकते हैं। मान लें कि प्रारंभ में उत्पादन OQ_2 था। यह S अल्पकालिक औसत लागत का मान दीर्घकालिक औसत लागत से अधिक है (SAC > LAC)। दूसरे शब्दों में STC > LTC। यदि उत्पादन में वृद्धि कर उसे OQ_1 तक ले जाते हैं तो SAC = LAC । यहां तो अल्पकालिक एवं दीर्घकालिक कुल लागतें भी समान हो जाती हैं। ध्यान दें कि जब उत्पादन को OQ_1 से आगे बढ़ाकर OQ_3 पर ले जाते हैं तो SAC का मान LAC से अधिक रहता है। अतः दीर्घकालिक लागत भी कुल अल्पकालिक लागत से कम रहती है। इसका कारण क्या है? वस्तुतः OQ_2 उत्पादन स्तर के बाद से ही SMC में कमी का क्रम धीमा हो जाता है और OQ_2 उत्पादन स्तर के बाद से ही SMC में कमी का क्रम धीमा हो जाता है और OQ_1 के बाद तो वह ऊपर उठने लगा है – जबकि LAC में निरंतर कमी ही चल रही है। अतः OQ_1 से OQ_3 के बीच SAC में वृद्धि होती है और LAC में कमी आती है।

एक व्यावहारिक विचार से, अल्पकाल सीमांत लागत तथा दीर्घकाल सीमांत लागत की समानता एक फर्म के लिए बहुत महत्त्वपूर्ण है। यदि उस फर्म को उत्पादन में बहुत थोड़ी मात्रा में वृद्धि करनी है, फिर चाहे वर्तमान कारखाने का प्रयोग जारी रखें तथा केवल परिवर्ती साधनों की मात्रा में परिवर्तन करें या कारखाने के आकार में थोड़ा परिवर्तन करें, परिणाम समान होगा। इसलिए, एक फर्म के दृष्टिकोण से, दोनों विधियां समान रूप से सही हैं।

बोध प्रश्न 4

1) निम्नलिखित कथनों में से **सत्य** तथा **असत्य** बताएं –

   i) दीर्घकाल में स्थिर लागत तथा परिवर्ती लागतों के बीच अंतर करने की कोई आवश्यकता नहीं होती।

   ii) दीर्घकाल औसत लागत वक्र, अल्पकाल औसत कुल लागत वक्र को आवरण प्रदान करता है।

   iii) दीर्घकाल सीमांत लागत वक्र, दीर्घकाल औसत लागत वक्र को उसके न्यूनतम स्तर पर नीचे से काटता है।

2) दीर्घकाल औसत लागत वक्र की प्रकृति की चर्चा करें।

   ....

   ....

   ....

3) दीर्घ अवधि आर्थिक दक्षता की अवधारणा की चर्चा कीजिए।

   ....

   ....

   ....

4) दीर्घकाल सीमांत लागत वक्र तथा दीर्घकाल औसत लागत वक्र के मध्य क्या संबंध है?

   ....

   ....

   ....

5) दीर्घकाल सीमांत लागत तथा अल्पकाल सीमांत लागत की मध्य संबंध की चर्चा करें।

....

....

....

8.7 सार-संक्षेप

इस इकाई के आरंभ में हमने लागत की विभिन्न अवधारणाओं जैसे निजी लागत, सामाजिक लागत, तथा आर्थिक लागत और लेखांकन लागत आदि की चर्चा की है। इसके पश्चात अल्पकाल लागत फलन तथा दीर्घकाल लागत फलन की चर्चा की गई। उसके बाद हम हमने स्थिर लागत तथा परिवर्ती लागत के बीच अंतर को परिभाषित किया। हम ध्यान दें कि कुल स्थिर लागत एक सीधी रेखा है जबकि कुल परिवर्ती लागत वक्र तथा कुल लागत वक्र दाईं ओर ऊपर की ओर उठता है। इसके पश्चात हमने चर्चा का रुख अल्पकाल लागत वक्र की ओर किया। ध्यान दें कि औसत स्थिर लागत वक्र की प्रकृति एक आयताकार अतिपरवलय की है। औसत स्थिर लागत वक्र में औसत परिवर्ती लागत वक्र को जोड़ा जाता है, हमें औसत लागत वक्र प्राप्त होता है। इसके साथ ही हमने सीमांत लागत तथा सीमांत लागत वक्र की प्रकृति की चर्चा की। ध्यान दें कि सीमांत लागत वक्र औसत लागत वक्र को उसके न्यूनतम बिंदु पर नीचे से काटता है।

8.8 संदर्भ ग्रंथादि

1) Robert S.Pindyck, Daniel L.Rubinfeld and Prem L. Mehta, *Microeconomics* (Pearson Education, Seventh Edition, 2010). Chapter 6, Section 6.1, 6.2, 6.3 and 6.4.

2) Dominick Salvatore, *Principles of Microeconomics* (Oxford University Presss, Fifth Edition, 2010). Chapter 8,Section 8.1, 8.2, 8.3, 8.4 and 8.5

3) A.Kountsoyiannis, *Modern Microeconomics* (The Macmillion Press Ltd. , Second edition, 1982), Chapter 4.

4) John P.Gould and Edward P.Lazear, *Microeconomic Theory* (All India Traveller Bookseller, Sixth edition, 1996). Chapter 8.

5) Ahuja H.L., *Advanced Economic Theory* (S.Chand and Company Ltd.), New Delhi, 2010, Chapter 20 pages 369-439.

8.9 बोध प्रश्नों के उत्तर अथवा संकेत

बोध प्रश्न 1

1) i) सत्य ii) सत्य iii) असत्य

iv) सत्य v) सत्य vi) असत्य

2) भाग 8.2 का उपभाग 8.2.2 देखें।

3) भाग 8.2 का उपभाग 8.2.1 देखें।

4) भाग 8.2 का उपभाग 8.2.4 देखें।

5) भाग 8.2 का उपभाग 8.2.5 देखें।

बोध प्रश्न 2

1) i) सत्य ii) सत्य iii) सत्य iv) असत्य

2) भाग 8.3 देखें।

3) भाग 8.4 का उपभाग 8.4.1 तथा 8.4.2 देखें।

4) भाग 8.4 का उपभाग 8.4.3, 8.4.4 तथा 8.4.5 देखें।

बोध प्रश्न 3

1) i) सत्य ii) सत्य iii) असत्य iv) असत्य

2) भाग 8.5 का उपभाग 8.5.3 देखें।

3) भाग 8.5 का उपभाग 8.5.3 तथा 8.5.4 देखें।

4) भाग 8.5 का उपभाग 8.5.5 देखें।

5) i) AFC =TFC/Q ii) AVC = TVC/Q iii) AC = TC/Q
iv) MC = Δ TC/Δ Q

बोध प्रश्न 4

1) i) सत्य ii) सत्य iii) सत्य

2) भाग 8.6 देखें।

3) भाग 8.6 का उपभाग 8.6.1 देखें।

4) भाग 8.6 का उपभाग 8.6.2 तथा 8.6.3 देखें।

5) भाग 8.6 का उपभाग 8.6.4 देखें।

ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY

शब्दावली

अल्पकाल : वह अवधि जिसमें फर्म की कम से कम एक आगत (प्लांट का आकार) स्थिर है।

असामान्य लाभ (Supernormal profit) : जब कोई फर्म दीर्घकाल में संसाधनों को वर्तमान उपयोग में बनाए रखते हुए लाभ अर्जित करती है तो वह असामान्य लाभ होता है इस अवस्था में कीमत > औसत लागत।

अल्पाधिकार : सीमित प्रतिस्पर्धा की स्थिति, जिसके अंतर्गत बाज़ार बड़े उत्पादकों या विक्रेताओं द्वारा आपस में बाँट लिया जाता है।

असाधारण लाभ (Abnormal profit) : सामान्य लाभ से अधिक लाभ – जिसे असामान्य लाभ या एकाधिकारी लाभ भी कहा जाता है। फर्मों के प्रवेश में कठोर बाधाएँ होने के कारण एकाधिकारी फर्म द्वारा दीर्घकाल में अर्जित किया जाने वाला लाभ असाधारण लाभ होता है।

अतिरिक्त क्षमता : अतिरिक्त क्षमता एक ऐसी स्थिति है जहाँ फर्म का वास्तविक उत्पादन उसके द्वारा उत्पादित किए जा सकने वाले उत्पादन (अनुकूलतम/आदर्श उत्पादन) से कम होता है। इसका अर्थ कभी-कभी इससे भी लगाया जाता है कि उत्पाद की वास्तविक माँग उस स्तर से कम है जिसे कि व्यवसाय आपूर्ति करने की क्षमता रखता है।

अंतरण आय : किसी साधन को वर्तमान रोज़गार में रोके रखने के लिए पर्याप्त न्यूनतम भुगतान इसे अन्य सर्वोत्तम रोज़गार में प्राप्त हो सकने वाली आय के रूप में भी व्यक्त किया जाता है।

अपूर्ण प्रतियोगिता : अपूर्ण प्रतियोगिता उस समय उत्पन्न होती है जब किसी बाज़ार में, प्राक्कल्पिक या वास्तविक रूप से नवप्रतिष्ठित विशुद्ध या पूर्ण प्रतियोगिता के किसी अभिलक्षण या तत्व का उल्लघंन किया जाता है।

अनुकूलतम उत्पाद मिश्रण : अर्थशास्त्र में उत्पादन के अनुकूलतम मिश्रण को उपलब्ध संसाधनों, प्रौद्योगिकी एवं सामाजिक मूल्यों के साथ उत्पादन के सर्वाधिक वांछित संयोगों के रूप में व्यक्त किया जाता है।

अपूर्ण सूचना : ऐसी स्थिति जब किन्हीं वस्तुओं एवं सेवाओं के बारे में क्रेताओं और विक्रेताओं के पास उपलब्ध सूचना में एकरूपता नहीं होती।

अंतर्राष्ट्रीय व्यापार : दो विभिन्न राष्ट्रों के क्रेताओं एवं विक्रेताओं के बीच होने वाला व्यापार अंतर्राष्ट्रीय व्यापार कहलाता है।

अनुकूलतम स्थिति : वह बिंदु जहां उत्पादन के विभिन्न साधनों का प्रयोग करते हुए उत्पादन के संभावित अधिकतम को प्राप्त किया जाता है।

अनुकूलतम स्थिति भंग : यह वह बिंदु है जहां अनुकूलतम स्थिति भंग हो जाती है, अर्थात् दिए गए संसाधनों से उत्पादन संभावित अधिकतम से कम हो जाता है।

अंतर्निहित लागतें : अंतर्निहित लागतें वे लागतें हैं जो फर्म के स्वयं के स्वामित्व वाले संसाधनों के प्रयोग से संबंधित हैं। क्योंकि ये साधन यदि किसी अन्य उत्पादन में प्रयोग किए जाएं तो ये संसाधन प्रतिफल प्रदान करते हैं। अतः इनका आरोपित मूल्य अंतर्निहित लागत का गठन करता है।

आर्थिक लाभ : फर्म के आगम में से आर्थिक लागत को घटाकर प्राप्त धनराशि।

आर्थिक लागत : आर्थिक लागत में लेखांकन लागत के साथ उत्पत्ति के साधन के अगले सर्वोत्तम विकल्प में प्राप्त प्रतिफल के समतुल्य अवसर लागत को शामिल किया जाता है।

आर्थिक लगान : किसी आगत के स्वामी को प्राप्त वह अतिरेक जो उसे आगत को किसी फर्म को प्रदान करने के लिए न्यूनतम धनराशि से ऊपर प्राप्त होता है।

आय प्रभाव : उपभोक्ता की वास्तविक आय में परिवर्तन द्वारा प्रेरित वस्तु या सेवा की मांग में परिवर्तन है।

कीमत में कोई भी वृद्धि या कमी के अनुरूप/परिणामस्वरूप उपभोक्ता की वास्तविक आय में कमी होती है या वृद्धि होती है जिसके परिणामस्वरूप उसी वस्तु या अन्य वस्तु के या सेवा के लिए मांग कम या अधिक होती है।

आय की असमानताएं : किसी अर्थव्यवस्था में विभिन्न आय वर्गों के बीच आय का वितरण।

आपूर्ति में वृद्धि : किसी वस्तु की दी हुई कीमत पर वस्तु की आपूर्ति में वृद्धि हो जाना।

आपूर्ति अनुसूची : दो कॉलम वाली तालिका जो विभिन्न कीमतों पर आपूर्ति की मात्रा को प्रदर्शित करती हैं।

आपूर्ति वक्र : अन्य बातें समान रहने पर एक निश्चित समयावधि में वस्तु की विभिन्न कीमतों पर आपूर्ति की मात्राओं के संबंध को प्रदर्शित करने वाला वक्र।

आगमनात्मक तर्कशैली : ऐसी विश्लेषण पद्धति जिसमें तथ्याधारित जानकारी का प्रयोग कर विभिन्न शक्तियों/संप्रेरणाओं के प्रति आर्थिक इकाइयों के व्यवहार के सांझे सूत्रों की पहचान होती है।

आपूर्ति : वस्तु की वह मात्रा जो उसकी किसी कीमत विशेष पर प्रत्येक समयावधि में बेचने के लिए विक्रेता तत्पर होते हैं।

आवश्यक वस्तुएँ : जीवन धारण की मूलभूत आवश्यकताओं को पूरा करने वाली वस्तुएँ।

आर्थिक नियम : प्रवृत्तियों विषयक कथन। ये विभिन्न शक्तियों/संप्रेरणाओं के फलस्वरूप अधिक अभिकर्ताओं की मानक या सामान्य प्रतिक्रियाएँ बताते हैं।

आर्थिक लागत : आर्थिक लागत से अभिप्राय फर्म द्वारा उत्पादन में आर्थिक संसाधनों के उपयोग की लागत से है जिसमें अवसर लागत भी शामिल है।

आंतरिक मितव्ययताएं : वे मितव्ययताएं जो फर्म को अपने आकार का विस्तार करने पर प्राप्त होती हैं उन्हें आंतरिक मितव्ययताओं के तौर पर जाना जाता है।

आंतरिक अपमितव्ययताएं : जब उत्पादन के पैमाने में लगातार विस्तार किया जाता है, फर्में एक ऐसे बिंदु पर पहुंच जाती हैं जहां उत्पादन में वृद्धि, उत्पादन के साधनों में वृद्धि की तुलना में कम होती है। इस बिंदु पर आंतरिक अपमितव्ययताएं लागू हो जाती हैं ।

आयताकार परवलय : ऐसा वक्र जिसके किसी भी बिंदु से उसके नीचे बनाए गए आयतों के क्षेत्रफल एकसमान हों।

आपूर्ति में कमी : किसी वस्तु की दी हुई कीमत पर वस्तु की आपूर्ति में कमी आ जाना।

आपूर्ति की लोच : कीमत परिवर्तन के प्रति आपूर्ति की मात्रा की संवेदनशीलता।

आपूर्ति का विस्तार : किसी वस्तु की पूर्ति में वृद्धि के फलस्वरूप वस्तु की आपूर्ति में वृद्धि।

आवंटनात्मक दक्षता (Allocative efficiency) : उपभोक्ताओं की माँग पर वस्तुओं/सेवाओं का उत्पादन उस कीमत पर करना जो पूर्ति की सीमांत लागत को दर्शाती है।

आवंटनात्मक दक्षता : आवंटनात्मक दक्षता किसी अर्थव्यवस्था के लिए वह अवस्था है जहाँ उत्पादन उपभोक्ता प्राथमिकताओं को इस प्रकार व्यक्त करता है कि प्रत्येक वस्तु एवं सेवा का उत्पादन उस बिंदु या स्तर तक किया जाता है जहाँ अंतिम इकाई उपभोक्ताओं को जो सीमांत लाभ प्रदान करती है वह उत्पादन की सीमांत लागत के बराबर होता है। एकल कीमत मॉडल में आवंटनात्मक दक्षता के बिंदु पर वस्तु अथवा सेवा की कीमत उसकी सीमांत लागत के बराबर होती है।

आभासी लगान : किसी साधन की औसत लागत से ऊपर उत्पत्ति के किसी साधन को प्राप्त होने वाली आय। यह एक अल्पकालीन अवधारणा है।

उत्पाद विभेद : सामान्य तौर पर एक-दूसरे से मिलती-जुलती लेकिन किसी न किसी आधार पर भिन्नता रखने वाली वस्तुओं की बिक्री। उपभोक्ताओं को इन्हीं में से अपनी पसंद तय करनी होती है।

उत्पादक दक्षता : उत्पादक दक्षता एक ऐसा आर्थिक स्तर है जहाँ अर्थव्यवस्था में किसी अन्य वस्तु के उत्पादन में कमी लाए बिना किसी वस्तु के उत्पादन में वृद्धि नहीं की जा सकती। यह स्थिति उसी अवस्था में उत्पन्न होती है जब अर्थव्यवस्था उत्पादन संभावना सीमा पर होती है।

उत्पादन संभावना वक्र	:	किसी अर्थव्यवस्था में दो वस्तुओं/सेवाओं के उन संयोजनों को व्यक्त करने वाला वक्र जिन्हें समाज अपने संसाधनों के दक्षतापूर्ण प्रयोग करते हुए उत्पादित कर सकता है।
उत्पादन फलन	:	वह तकनीकी नियम जो, साधन आगतों तथ निर्गत के बीच संबंध को व्यक्त करता है, उत्पादन फलन कहलाता है।
उपभोक्ता संतुलन	:	वह बिंदु जिस पर एक उपभोक्ता दी गई आय तथा कीमतों के प्रतिबंधों के अंतर्गत वस्तुओं एवं सेवाओं की खरीद से अनुकूलतम उपयोगिता या संतुष्टि पर पहुँचता है।
उपभोग	:	किसी आवश्यकता की संतुष्टि की प्रक्रिया में वस्तुओं में अंतर्निहित उपयोगिता का प्रयोग।
उपयोगिता	:	वस्तुओं की आवश्यकताएँ पूर्ण कर पाने की क्षमता। यह उपभोक्ता को किसी चीज़ से मिली संतुष्टि या सेवा ही है।
एकाधिकार	:	वस्तु के कोई निकट स्थानापन्न नहीं होने की दशा में किसी वस्तु का एकमात्र उत्पादक (विक्रेता) होना।
एकाधिकारिक प्रतियोगिता	:	अनेक फर्में एक-दूसरे से मिलता-जुलता लेकिन विभेदीकृत वस्तुओं का उत्पादन करती हैं जो एक-दूसरे के निकट स्थानापन्न होते हैं। दूसरे शब्दों में, अधिक संख्या में विक्रेता फर्म लगभग एक जैसी (लेकिन एकसमान नहीं), वस्तुएँ बेचती हैं तथा कीमत और अन्य कारकों में एक-दूसरे से प्रतियोगिता करती हैं।
सीमांत आगम उत्पाद (एम.आर.पी.)	:	सीमांत आगम उत्पाद अर्थात् सीमांत आगम एवं साधन के सीमांत उत्पाद का गुणनफल।
एकाधिकारी	:	किसी वस्तु की संपूर्ण आपूर्ति पर नियंत्रण रखने वाला उत्पादक।
ऐतिहासिक लागत	:	ऐतिहासिक लागत वह लागत है जो संपत्ति को क्रय करते समय वास्तव में व्यय हो चुकी है।
औसत उत्पाद	:	जब कुल उत्पाद को प्रयोग की गई आगत की इकाइयों की संख्या से भाग किया जाता है वह औसत उत्पाद है।
कटक (रिज) रेखाएं	:	उत्पादन के आर्थिक क्षेत्र की सीमाओं का निर्धारण करने वाली रेखाओं को कटक (रिज) रेखाओं के रूप में जाना जाता है।
कीमत विभेद (Price discrimination)	:	जब कोई फर्म लागत से कोई संबंध न होते हुए भी उत्पादित वस्तु अथवा सेवा की अलग-अलग क्रेताओं से अलग-अलग कीमत वसूलती है तो उसे कीमत विभेद की संज्ञा दी जाती है।
कैदी की दुविधा	:	द्यूत सिद्धांत में एक ऐसी स्थिति जिसमें दो खिलाड़ियों के पास केवल दो ही विकल्प होते हैं जिनका परिणाम एक

दूसरे द्वारा एक साथ लिए गए निर्णयों पर निर्भर करता है। इसे प्रायः दो कैदियों द्वारा अपराध को स्वीकार कर लेने या न करने के रूप में व्यक्त किया जाता है।

कूर्नो प्रतिमान : अल्पाधिकार का कूर्नो प्रतिमान इस मान्यता पर आधारित है कि दो प्रतिस्पर्धी फर्में एक जैसी वस्तु का उत्पादन करती हैं तथा यह निर्धारित कर कि कितना उत्पादन करना है अपने लाभ को अधिकतम करने का प्रयास करती हैं। सभी फर्में अपने द्वारा किए जाने वाले उत्पादन की मात्रा का निर्धारण एक साथ करती हैं।

कीमत अनुपात या सापेक्षिक कीमत : किसी वस्तु की कीमत जो किसी अन्य वस्तु की कीमत के सापेक्ष व्यक्त की जाती है। सापेक्षिक कीमत को प्रायः दो कीमतों के अनुपात के रूप में व्यक्त किया जाता है।

कीमत सीमा : सरकार द्वारा किसी वस्तु या सेवा की अधिकतम सीमा निर्धारित कर देना।

कीमत प्रभाव : बाज़ार में उत्पाद या सेवा के लिए उपभोक्ता की मांग पर इसकी कीमत में परिवर्तन का प्रभाव पड़ता है। किसी वस्तु की कीमत पर किसी घटना के प्रभाव को भी कीमत प्रभाव कह सकते हैं। कीमत प्रभाव प्रतिस्थापन प्रभाव तथा आय प्रभाव का एक परिणामी प्रभाव है।

कुल उपयोगिता : किसी वस्तु की सभी उपभोग की गई इकाइयों से मिली उपयोगिता का योगफल।

गणनावाचक उपयोगिता : गणनावाचक उपयोगिता दृष्टिकोण नव-प्रतिष्ठित अर्थशास्त्रियों ने प्रतिपादित किया था, जिन्हें विश्वास था कि उपयोगिता मापनीय है तथा ग्राहक गणनात्मक या मात्रात्मक अंक जैसे 1, 2, 3 इत्यादि में अपनी संतुष्टि को व्यक्त कर सकता है।

गैर-सहयोगात्मक व्यवहार : अल्पाधिकार को सर्वोत्तम रूप में बाज़ार के भीतर उसके वास्तविक व्यवहार के रूप में परिभाषित किया जाता है। सकेंद्रीकरण अनुपात उस स्तर या सीमा का माप करता है जहाँ तक बाज़ार की कुछ फर्मों के बीच कोई एक फर्म प्रभुत्व रखती है। यह फर्में जब आपस में मिलकर कार्य करने के लिए समझौता कर लेती हैं तो उसे अल्पाधिकारी बाज़ार में सहयोगात्मक व्यवहार के रूप में जाना जाता है।

गैर-अपवर्जनीयता : भुगतान न करने वाले किसी भी उपभोक्ता को उपयोग करने से वंचित न किए जाने की स्थिति।

गैर-प्रतिद्वंद्वी : जब किसी व्यक्ति द्वारा किसी वस्तु का उपभोग किए जाने से किसी अन्य के हिस्से में कोई कमी नहीं होती।

गुणवाची अर्थशास्त्र : क्या वांछनीय है और वर्तमान दशाओं में कैसे परिवर्तनों द्वारा उसे पाया जा सकता है? इस प्रकार के प्रश्नों का अध्ययन करने वाली अर्थशास्त्र की प्रशाखा।

गिफ्फन वस्तु : ऐसी वस्तुएं जिनकी कीमत और मांग की मात्रा के बीच सीधा संबंध होता है।

घटते प्रतिफल के नियम : जब एक आगत की अधिक इकाइयों का अन्य आगत की स्थिर मात्रा के साथ प्रयोग किया जाता है, परिवर्ती आगत का सीमांत उत्पाद एक बिंदु के पश्चात् घटता है।

डूबत लागत : डूबत लागत वह लागत है जो व्यय की जा चुकी है तथा जिसे वापस प्राप्त नहीं किया जा सकता।

तकनीकी प्रतिस्थापन की सीमांत दर : प्रतिस्थापन की दर या प्रतिस्थापन की सीमांत दर वह दर है जहाँ किसी अन्य वस्तु की एक अतिरिक्त इकाई का उत्पादन (सीमांत इकाई) करने के लिए किसी वस्तु की कुछ मात्रा का त्याग करना पड़ता है। यह मानकर चला जाता है कि दोनों ही वस्तुओं का उत्पादन करने के लिए एक जैसे दुर्लभ आगतों का प्रयोग किया जाता है। रूपांतरण की सीमांत दर उत्पादन संभावना सीमा (PPF) से संबद्ध है जो समान संसाधनों को प्रयुक्त करते हुए दो वस्तुओं के संभाव्य उत्पादन को व्यक्त करता है।

तुलनात्मक लाभ : किसी देश A को वस्तु x के उत्पादन में तुलनात्मक लाभ प्राप्त है यदि घरेलू स्तर पर उसकी लागत किसी अन्य देश में उसी वस्तु की लागत की तुलना में कम है।

दीर्घकाल : वह अवधि जिसमें प्लांट की क्षमता सहित सभी आगतें परिवर्तनशील हैं।

न्यूनतम मज़दूरी अधिनियम : सरकार द्वारा विभिन्न प्रकार के रोज़गारों के लिए निर्धारित न्यूनतम मज़दूरी से संबंधित कानून।

निःशुल्क सवारी : किसी व्यक्ति द्वारा किसी वस्तु या सेवा का मूल्य चुकाए बिना उसका उपयोग करना।

नैतिक द्वंद्व : किसी दूसरे पक्ष से जानबूझ कर कुछ सूचना का छुपाया जाना।

नति परिवर्तन बिंदु (Inflexion point) : वह बिंदु जहां कुल उत्पाद बढ़ती दर से बढ़ना बंद करता है तथा घटती दर से बढ़ना आरंभ करता है नति परिवर्तन बिंदु कहलाता है।

निर्भर चर : ऐसा चर जिसका मान किसी स्वतंत्र चर में परिवर्तन के साथ ही बदलता हो।

निकृष्ट पदार्थ : ऐसी वस्तुएँ जिनकी मांग की मात्रा और उपभोक्ता की आय में विलोम संबंध होता है।

निजी पदार्थ : ऐसे पदार्थ जिनका उपभोग चुने हुए प्रयोक्ताओं तक सीमित रखा जा सके। इस तरह से इनका स्वरूप विभाजनीय हो जाता है।

पूर्ण प्रतियोगी बाज़ार : एक बाज़ार पूर्ण प्रतियोगिता वाला बाज़ार है यदि इससे अनेक उपभोक्ता एवं अनेक फर्में हैं, किसी के पास भी बाज़ार का कोई बड़ा हिस्सा नहीं है, सभी फर्में एक जैसी वस्तु का उत्पादन करती हैं, बाज़ार में प्रवेश करने तथा बाज़ार से बाहर निकलने में कोई बाधा नहीं है तथा उत्पादकों एवं उपभोक्ताओं को बाज़ार की पूरी जानकारी है।

पॉल स्वीज़ी का कोनेदार मांग वक्र	: कोनेदार माँग वक्र का सिद्धांत अल्पाधिकार एवं एकाधिकारिक प्रतियोगिता का एक आर्थिक सिद्धांत है।
प्रतिकूल चयन	: जब असमान सूचना के चलते किसी सौदे का एक पक्ष को अर्द्ध अनुकूलतम चयन करना पड़ता है।
पदार्थ	: ऐसी चीज़ें जिनमें उपयोगिता हो अथवा जिसका अन्य वस्तुओं/सेवाओं के उत्पादन में प्रयोग हो सके।
पैमाने के स्थिर प्रतिफल	: पैमाने के स्थिर प्रतिफल से तात्पर्य है कि जब सभी आगतों को एक निश्चित अनुपात में बढ़ाया जाता है, तब उत्पादन भी समान अनुपात में बढ़ता है ।
पैमाने के घटते प्रतिफल	: पैमाने के घटते प्रतिफल का संदर्भ उस स्थिति से है जब उत्पाद आगतों की तुलना में कम अनुपात में बढ़ता है।
पैमाने के बढ़ते प्रतिफल	: पैमाने के बढ़ते प्रतिफल से अभिप्राय उस स्थिति से है जब उत्पाद आगतों की तुलना में अधिक अनुपात में बढ़ता है।
प्रतिस्थापक वस्तु	: वह वस्तु जिसकी मांग का किसी वस्तु की मांग के साथ विलोम संबंध हो।
पूर्ति का संकुचन	: कीमत में कमी के कारण आपूर्ति की मात्रा में आयी कमी।
प्रतिस्थापन प्रभाव	: कीमत में वृद्धि के कारण मांग में आया वह प्रभाव जो एक उपभोक्ता को एक सापेक्षिक रूप से कम कीमत वाली वस्तु की उच्च कीमत वाली से अधिक खरीदने के लिए प्रेरित करता है।
प्रतिस्थापन लागत	: प्रतिस्थापन लागत वह लागत है जो संपत्ति का पुनर्स्थापन करने पर व्यय होगा (प्रतिस्थापन लागत समान प्रकार की नई संपत्ति की वर्तमान लागत होती है)।
प्रतिस्थापन प्रभाव	: अन्य कीमतें स्थिर रहने पर एक वस्तु की कीमत के वह प्रभाव जो अन्य वस्तुओं के स्थान पर इस वस्तु की मांग में आए परिवर्तन को दिखाते हैं।
प्रयोग मूल्य	: वस्तुओं की उपयोगिता।
प्रवाह चर	: ऐसा चर जिसे किसी अवधि के अनुसार ही अभिव्यक्त किया जाता है।
ब्याज	: पूँजी के उपयोग हेतु भुगतान की जाने वाली धनराशि ब्याज ही ब्याज वस्तुओं एवं सेवाओं के उत्पादन में प्रयुक्त की जाने वाली मानव निर्मित वस्तुओं (मशीनों) के लिए भुगतान किया जाता है।
बाह्यताएँ	: किसी अर्थव्यवस्था में बाह्यताएँ उस समय उत्पन्न होती हैं जब उत्पादन या उपभोग किसी ऐसे तीसरे पक्ष को प्रभावित करता है जिसका ऐसे उत्पादन या उपभोग से कोई संबंध नहीं होता।
बाह्य मितव्ययताएं	: जब एक फर्म उत्पादन आरंभ करती है, उसे अनेक ऐसी मितव्ययताएं प्राप्त होती हैं जिसके लिए उसकी स्वयं की रणनीति या योजनाएं जिम्मेदार नहीं होतीं। ये सभी फर्मों की बाह्य मितव्ययताएं कहलाती हैं ।

बाह्य अपमितव्ययताएं	: जब उत्पादन के पैमाने में विस्तार किया जाता है, तब अनेक ऐसी अपमितव्ययताएं भी उत्पन्न होती हैं जिनका स्वयं फर्म पर कोई बुरा प्रभाव नहीं पड़ता किंतु इनका भार अन्य फर्मों को सहन करना पड़ता है। इन्हें बाह्य अमितव्ययताओं के तौर पर जाना जाता है ।
बजट रेखा	: बजट रेखा, जिसे बजट प्रतिबंध भी कहा जाता है दो वस्तुओं के उन सभी संयोजनों को दर्शाता है जिन्हें एक उपभोक्ता बाज़ार कीमतों के दिए हुए होने पर तथा विशिष्ट आय स्तर के अंतर्गत खरीद सकता है।
बाज़ार अपूर्णताएँ	: बाज़ार की ऐसी दशाएं जो पूर्ण प्रतियोगिता के अनुरूप नहीं हैं।
बाज़ार विफलताएँ	: अर्थव्यवस्था में संसाधनों के दक्ष आवंटन को प्राप्त करने में लिए बाज़ार तंत्र की विफलता।
मज़दूरी	: तकनीकी विशेषज्ञता और शारीरिक श्रम के द्वारा वस्तुओं एवं सेवाओं के उत्पादन हेतु किए गए मानव प्रयास के रूप में श्रमिक को भुगतान किए जाने वाले पारितोषक को मज़दूरी कहते हैं।
माँग	: नियत इकाई कीमत पर किसी वस्तु/सेवा की जितनी इकाइयाँ हमारा उपभोक्ता प्रति समयावधि खरीदने को तत्पर हो।
मांग की आय लोच	: उपभोक्ता की आय में आनुपातिक परिवर्तन के प्रति उपभोक्ता की मांग की संवेदनशीलता।
माँग में परिवर्तन	: पूरे माँग वक्र का विवर्तन या खिसकाव।
माँग की मात्रा में परिवर्तन	: वस्तु की कीमत में परिवर्तन के कारण मांग वक्र के एक बिंदु से दूसरे बिंदु तक चलना।
मौद्रिक विनिमय	: मुद्रा के बदले किसी वस्तु/सेवा की बिक्री।
यथार्थवादी या सकारात्मक अर्थशास्त्र	: किसी यथास्थिति की वांछनीयता पर टिप्पणी किए बिना और उसमें परिवर्तन के सुझाव दिए बिना उसका निरूपण करने वाली अर्थशास्त्र की प्रशाखा।
लगान	: भूमि के उपयोग हेतु किए जाने वाले भुगतान को लगान कहते हैं। उत्पादन प्रक्रिया में प्रयुक्त किए जाने वाले समस्त प्राकृतिक संसाधन भूमि के अंतर्गत आते हैं।
लाभ	: उत्पादन प्रक्रिया में अपने संगठन एवं कौशल के उपयोग तथा जोखिम वहन करने के लिए उद्यमी को प्राप्त होने वाला पारितोषक लाभ है।
लेखांकन लागत	: लेखांकन लागत से अभिप्राय फर्म के वास्तविक व्यय तथा पूँजीगत उपकरणों के मूल्यह्रास व्यय से है।
व्यापार संगुट	: प्रतिस्पर्धा को नियंत्रित रखकर कीमतों को ऊँचा रखने के उद्देश्य से विनिर्माताओं या आपूर्तिकर्ताओं का संघ।

व्युत्पन्न माँग : उत्पत्ति के साधनों की माँग इसलिए की जाती है क्योंकि उनके द्वारा उत्पादित वस्तुओं एवं सेवाओं की माँग की जाती है। इसलिए साधनों की माँग व्युत्पन्न माँग है।

वी.एम.पी. : सीमांत उत्पाद का मूल्य अर्थात् कीमत एवं साधन के सीमांत उत्पाद का गुणनफल।

वाणिज्यवाद : व्यापार का यह सिद्धांत बताता है कि देश को निर्यातों को बढ़ावा देना चाहिए तथा आयातों को हतोत्साहित करना चाहिए। वाणिज्यवादियों का तर्क था कि राष्ट्र अपने निर्यातों में वृद्धि करके तथा आयातों में कमी लाकर ही बहुमूल्य धातुओं (सोना) के रूप में अधिकाधिक संपत्ति संचित कर सकता है।

विकुंचित वक्र (Non-linear Curve) : वह आपूर्ति वक्र जो एक सीधी रेखा न हो।

विशेष गुण पदार्थ (Merit Goods) : ऐसी वस्तुएँ/सेवाएँ जिनका उपभोग उनके उपभोक्ता ही नहीं पूरे समाज को भी लाभान्वित करता है।

विलासिताएँ : ऐसी वस्तुएं जो सामाजिक मान-प्रतिष्ठा के लिए ही प्रयोग की जाती हैं।

वस्तु विनियम : वस्तुओं/सेवाओं के बदले वस्तुएँ/सेवाओं का ही क्रय-विक्रय या विनिमय।

विनियम मूल्य : किसी वस्तु की बाज़ार में प्रचलित कीमत।

व्यष्टि अर्थशास्त्र : व्यक्ति स्तरीय आर्थिक इकाइयों या उनके समूहों अथवा वस्तु स्तर पर कीमत आदि चरों का अध्ययन करने वाली अर्थशास्त्र की प्रशाखा।

वृद्धिशील लागत : उत्पादन में एक वृद्धि होने के परिणामस्वरूप कुल लागत में होने वाली वृद्धि वृद्धिशील लागत होती है।

रेखीय समरूप उत्पादन फलन : जब उत्पाद में समान अनुपात में वृद्धि होती है जिसमें आगतों में वृद्धि हुई है, उत्पादन फलन रेखीय समरूप है। उदाहरणार्थ, यदि श्रम तथा पूँजी में λ गुणा की वृद्धि हुई है, परिणामस्वरूप, उत्पाद में भी λ गुणा वृद्धि होती है, तब उत्पादन फलन रेखीय समरूप है।

सामान्य लाभ : सामान्य लाभ एक ऐसी आर्थिक दशा है जो उस समय उत्पन्न होती है जबकि फर्म के कुल आगम एवं कुल लागत के बीच का अंतर शून्य होता है। सरल शब्दों में, किसी फर्म को बाज़ार में प्रतिस्पर्धी बनाए रखने के लिए आवश्यक लाभ ही सामान्य लाभ है।

सहयोगात्मक व्यवहार : सहयोगात्मक अल्पाधिकार के अंतर्गत कुछ ही उत्पादक होते हैं जो संसाधनों का आवंटन आपस में करने तथा उत्पादन की कीमत निर्धारित करने के लिए आपस में सहयोग करते हैं। व्यापार संगुट, सहयोगात्मक अल्पाधिकार का एक उदाहरण है।

स्टैकिलबर्ग प्रतिमान : स्टैकलबर्ग प्रतिमान अर्थशास्त्र में एक रणनीतिक द्यूत है जिसमें नेतृत्व करने वाली फर्में पहले चाल चलती हैं

अर्थात् निर्णय लेती हैं जिसके क्रम में अन्य फर्में निर्णय लेती हैं। स्टैकलबर्ग संतुलन बनाए रखने में आगे बाधाएं आती हैं।

सीमांत (भौतिक उत्पाद) : उत्पत्ति के अन्य साधनों को स्थिर रखते हुए किसी एक साधन की एक अतिरिक्त इकाई को काम पर लगाने से उत्पादित मात्रा में हुआ परिवर्तन।

सीमांत आगम उत्पाद : सीमांत भौतिक उत्पाद में सीमांत आगम से गुणा करने पर प्राप्त गुणनफल।

संसाधनों का दक्ष आवंटन : आगतों, उत्पादन और उत्पादन का ऐसा वितरण जो अर्थव्यवस्था में किसी परिवर्तन से किसी भी व्यक्ति को खराब स्थिति में पहुँचाएं बिना किसी अन्य व्यक्ति को बेहतर स्थिति में न पहुँचा पाए (समभाव वक्र चित्र द्वारा मापित)।

समभाव वक्र या उपयोगिता सीमा : एक समभाव वक्र दो आर्थिक वस्तुओं के उन विभिन्न संयोगों को इंगित करता है जिन पर उपभोक्ता का व्यवहार समभावपूर्ण रहता है, भले ही वह कोई भी संयोग चुन ले।

समोत्पाद वक्र : समोत्पाद वक्र एक ऐसा ग्राफ है जिस पर स्थित प्रत्येक बिंदु पर सभी आगतों के संयोग वस्तु की एकसमान मात्रा उत्पादित करते हैं।

सीमांत प्रतिस्थापन दर : प्रतिस्थापन की सीमांत दर ऐसी दर है जिस पर कोई उपभोक्ता किसी एक वस्तु की मात्रा को किसी दूसरी वस्तु की मात्रा से प्रतिस्थापित करने के लिए तैयार है, उस सीमा तक जब तक कि ऐसा करने से उसकी संतुष्टि का स्तर एक समान रहे। इसे समभाव वक्र सिद्धांत में उपभोक्ता के व्यवहार का विश्लेषण करने के लिए प्रयुक्त किया जाता है।

सार्वजनिक वस्तुएँ : ऐसी वस्तुएँ एवं सेवाएँ जिनके उपयोग से किसी भी व्यक्ति को वंचित नहीं किया जा सकता एवं किसी एक व्यक्ति द्वारा ऐसी वस्तुओं/सेवाओं का उपयोग किए जाने से इन्हीं वस्तुओं/सेवाओं के उपयोग में किसी अन्य व्यक्ति के लिए कोई कमी नहीं आती।

सार्वजनिक हस्तक्षेप : वस्तुओं, सेवाओं एवं अन्य कारकों के लिए बाज़ार में सरकार द्वारा किए जाने वाले कार्य।

सार्वजनिक प्रावधान : सरकारी अधिकारियों/निकायों द्वारा सामाजिक दृष्टि से वांछित एवं महत्त्वपूर्ण वस्तुएँ एवं सेवाएँ अंतिम उपभोक्ताओं तक पहुँचाना।

सामूहिक संसाधन : जहाँ किसी संसाधन का कोई स्वामी नहीं होता लेकिन जिनके प्रयुक्तकर्ता अनेक होते हैं।

साधन संपन्नता : किसी देश के पास भूमि, श्रम और पूँजी आदि जैसे साधनों की उपलब्धता।

सार्वजनिक पदार्थ : ऐसी वस्तुएँ/सेवाएँ जिनकी सुलभता को कुछ ही व्यक्तियों तक सीमित नहीं रखा जा सकता। इनके

हितलाभ अविभाज्य होते हैं– किसी व्यक्ति को उनसे लाभान्वित होने से वंचित या बहिष्कृत नहीं रखा जा सकता।

सुविधाएँ : ऐसे पदार्थ की चर्चा हमारी उत्पादन क्षमता और सुख-सुविधा से वर्धित करने में सहायक हों।

समष्टि अर्थशास्त्र : अर्थशास्त्र की वह प्रशाखा जिसमें समूचे अर्थतंत्र या उसके एक बहुत बड़े प्रखंड का अध्ययन होता है।

सीमांत इकाई : विचारगत चर की अंतिम इकाई का मान।

सीमांत उपयोगिता : यह उपभोक्ता द्वारा एक इकाई अधिक उपभोग करने पर उसे प्राप्त उपयोगिता है। यह एक महत्त्वपूर्ण संकल्पना है, अर्थशास्त्री इसी को प्रयोग कर यह आकलन करते हैं कि कोई उपभोक्ता किसी वस्तु की कितनी इकाइयाँ खरीदने को तैयार होगा।

स्टॉक (या भंडार) चर : ऐसा चर जिसका परिमाण किसी समय बिंदु पर ही मापा जाता है।

संपूरक पदार्थ : ऐसी वस्तु जिसकी मांग का किसी वस्तु के उपभोग के साथ सीधा संबंध हो।

समलागत रेखा : एक समलागत रेखा, आगतों के विभिन्न संयोगों को दर्शाती है जो एक दी गई व्यय राशि से क्रय की जा सकती है।

सम-उत्पाद वक्र : एक सम-उत्पाद वक्र उत्पादन के दो साधनों के सभी संयोगों का ज्यामातीय प्रस्तुतीकरण है जो उत्पाद का समान स्तर प्राप्त करता है।

सीमांत तकनीकी प्रतिस्थान दर ($MRTS_{L,K}$) : साधन श्रम (L) के लिए साधन पूँजी (K) की सीमांत तकनीकी प्रतिस्थापन की दर पूँजी (K) की वह मात्रा में कमी है, जो कि श्रम (L) की मात्रा में एक इकाई की वृद्धि करने पर उत्पाद स्तर को अपरिवर्तित रखने के लिए की जाती है।

स्पष्ट लागत : स्पष्ट लागतें एक फर्म तथा अन्य पक्षों के बीच होने वाले लेन-देन के कारण उत्पन्न होती हैं जिसमें फर्म उत्पादन करने के लिए आदतों या सेवाओं का क्रय करती है।

श्रम संघ : अपने अधिकारों के संरक्षण हेतु श्रमिकों का एक मान्यता प्राप्त संगठन।

कुछ उपयोगी पुस्तकें

1) Kautsoyiannis, A. (1979), *Modern Micro Economics*, London: Macmillan.

2) Lipsey, RG (1979), *An Introduction to Positive Economics*, English Language Book Society.

3) Pindyck, Robert S. and Daniel Rubinfield, and Prem L. Mehta (2006), *Micro Economics*, An imprint of Pearson Education.

4) Case, Karl E. and Ray C. Fair (2015), *Principles of Economics*, Pearson Education, New Delhi.

5) Stiglitz, J.E. and Carl E. Walsh (2014), *Economics*, viva Books, New Delhi.

ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY